

१लोक- इतिश्री वात्स्यायनीय कामसूत्रे साधारणे, प्रथमधिकरेण शास्त्र संग्रह प्रथमोद्यायः॥

[www.freehindipdfbooks.com](http://www.freehindipdfbooks.com)

## अध्याय 2 त्रिवर्ग प्रतिपत्ति प्रकरण

**श्लोक (1)- शतायुर्वं पुरुषों विभज्य कालमन्योन्यानुबद्धं परस्परस्यानुपघातकं त्रिवर्गं सेवेत्॥**

अर्थ- शांत जीवन बिताने वाला मनुष्य अपने पूरे जीवन को आश्रमों में बांटकर धर्म, अर्थ, काम इन तीनों का उपयोग इस प्रकार से करें कि यह तीनों एक-दूसरे से संबंधित भी रहे तथा आपस में विघ्नकारी भी न हो।

मनुष्य की उम्र 100 साल की निर्धारित की गई है। अपने इस पूरे जीवन को सुखी और सही रूप से चलाने के लिए ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास नाम के चार भागों में बांटकर धर्म, अर्थ और काम का साधन, संपादन इस प्रकार से करना चाहिए कि धर्म, अर्थ, काम में आपस में विरोध का आभास न हो तथा वे एक-दूसरे के पूरक बनकर मोक्षप्राप्ति के साधन बन सकें।

इस संसार के सभी मनुष्य लंबे जीवन, आदर, ज्ञान, काम, न्याय, और मोक्ष की इच्छा रखते हैं। सिर्फ वेदों की शिक्षा ही ऐसी है कि जो मनुष्यों के लंबे जीवन की सुविधा के दृष्टिगत सभी व्यक्तियों को इन इच्छाओं में विवेक पैदा कराके और बराबर अधिकार दिलाकर सबको मोक्ष की ओर अग्रसर करती है।

आचार्य वात्स्यायन ने शतायुर्वं पुरुष लिखकर इस बात को साफ किया है कि कामसूत्र का मकसद मनुष्य को काम-वासनाओं की आग में जलाकर रोगी और कम आयु का बनाना नहीं बल्कि निरोगी और विवेकी बनाकर 100 साल तक की पूरी उम्र प्राप्त करना है।

लंबी जिंदगी जीने के लिए सबसे पहला तरीका सात्त्विक भोजन को माना गया है। सात्त्विक भोजन में धी, फल, फूल, दूध, दही आदि को शामिल किया जाता है। अगर कोई मनुष्य अपने रोजाना के भोजन में इन चीजों को शामिल करता है तो वह हमेशा स्वस्थ और लंबा जीवन बिता सकता है।

सात्त्विक भोजन के बाद मनुष्य को लंबी जिंदगी जीने के लिए पानी, हवा और शारीरिक परिश्रम भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। रोजाना सुबह उठकर ताजी हवा में धूमना बहुत लाभकारी रहता है। इसके साथ ही खुले और अच्छे माहौल में रहने और शारीरिक मेहनत करते रहने से भी स्वस्थ और लंबी जिंदगी को जिया जा सकता है।

इसके बाद लंबी जिंदगी जीने के लिए स्थान आता है दिमाग को हरदम तनाव से मुक्त रखने का। बहुत से लोग होते हैं जो अपनी पूरी जिंदगी चिंता में ही घुलकर बिता देते हैं। चिंता और चिता में सिर्फ एक बिंदू का ही फर्क होता है लेकिन इनमें भी चिंता को ही चिता से बड़ा माना गया है। क्योंकि चिता तो सिर्फ मरे हुए इंसानों को जलाती है लेकिन चिंता तो जीते जी इंसान को रोजाना जलाती रहती है। इसलिए अपने आपको जितना हो सके चिंता मुक्त रखें तो जिंदगी को काफी लंबे समय तक जिया जा सकता है।

इसके बाद लंबी जिंदगी जीने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना भी बहुत जरूरी होता है। योगशास्त्र के अनुसार ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन करके ही वीर्य को बढ़ाया जा सकता है और वीर्य बाहुबलम् वीर्य से शारीरिक शक्ति का विकास होता है। वेदों में कहा गया है कि बुद्धिमान और विद्वान लोग ब्रह्मचर्य का पालन करके मौत को भी जीत सकते हैं।

सदाचार को ब्रह्मचर्य का सहायक माना जाता है। जो लोग निष्ठावान, नियम-संयम, संपन्नशील, सत्य तथा चरित्र को अपनाए रहते हैं, वही लोग ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए लंबी जिंदगी को प्राप्त करते हैं। सदाचार को अपनाकर कोई भी मनुष्य अपनी पूरी जिंदगी आराम से बिता सकता है।

कोई भी बच्चा जब ब्रह्मचर्य अपनाकर अपने गुरु के पास शिक्षा लेता है तो वह 4 महत्वपूर्ण बातें सीखता है। कई प्रकार की विद्याओं का अभ्यास करना, वीर्य की रक्षा करके शक्ति को संचय करना, सादगी के साथ जीवन बिताने का अभ्यास करना, रोजाना सन्ध्योपासन, स्वाध्याय तथा प्राणायाम का अभ्यास करना, भारतीय आर्य सभ्यता की इमारत इन्ही 4 खंभों पर आधारित है। ब्रह्मचर्य जीवन को सफल बनाने वाली जितने बाती है, सभी प्राप्त होती है।

ब्रह्मचर्य जो कि उम्र का पहला चरण है, जब परिपक्व हो जाए तो मनुष्य को शादी करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करके अर्थ, धर्म, काम तथा मोक्ष का सम्पादन विधिवत् करना चाहिए। यहां पर वात्स्यायन इस बात का संकेत करते हैं कि अर्थ, धर्म तथा काम का उपयोग इस प्रकार किया जाए कि आपस में संबद्ध रहें और एक-दूसरे के प्रति विघ्नकारी साबित न हो।

एक बात को बिल्कुल साफ है कि अगर सही तरह से ब्रह्मचर्य का पालन किया जाए तो गृहस्थ आश्रम अधूरा, क्षुब्ध और असफल ही रहता है। इसी बजह से हर प्रकार की स्थिति में हर आश्रम में पहुंचकर उसके नियमों का पालन विधि से करने से ही कामयाबी मिलती है।

ब्रह्मचर्य जीवन को गृहस्थ आश्रम से जोड़ने का अर्थ यही होता है कि वीर्यरक्षा, सदाचरण, शील, स्वाध्याय अगर ब्रह्मचर्य आश्रम में सही तरह से किया गया है तो गृहस्थआश्रम में दाम्पत्य जीवन अकलुष आनंद तथा श्रेय प्रेय संपादक बन सकता है। गृहस्थआश्रम को धर्मकर्म पूर्वक बिताने पर वानप्रस्थ का साधन शांति से और बिना किसी बाधा के हो सकता है और फिर वानप्रस्थ की साधना सन्यास आश्रम में पहुंचकर मोक्ष प्राप्त करने में मदद करती है।

**श्लोक (2)- वयोद्वारेण कालविभागमाह-बाल्ये विद्याग्रहणादीनर्थान्॥**

अर्थ- अब क्रमशः उम्र के विभाग के बारे में बताया गया है।

बचपन की अवस्था में विद्या को ग्रहण करना चाहिए।

**श्लोक (3)- कामं च यौवने॥**

अर्थ- जवानी की अवस्था में ही काम चाहिए।

**श्लोक (4)- स्थाविरे धर्म मोक्षं च॥**

अर्थ- बुढ़ापे की अवस्था में मोक्ष और धर्म का अनुष्ठान करना चाहिए।

**श्लोक (5)- अनित्यत्वादायुषो यथोपपादं वा सेवेत्॥**

अर्थ- लेकिन जिंदगी का कोई भरोसा नहीं है इसलिए जितना भी इसको जी सकते हो जी लेना चाहिए।

**श्लोक (6)- ब्रह्मचर्यमेव त्वा विद्याग्रहणात्॥**

अर्थ- विद्या ग्रहण करने के बाद ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।

धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थ के 3 भेद होते हैं। बाल्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था 3 अवस्थाएं होती हैं। हर इंसान की उम्र 100 साल निर्धारित की गई है। आचार्य वात्स्यायन के मुताबिक 100 वर्ष की उम्र को 3 भागों में बांटकर पुरुषार्थों का उपभोग तथा उपार्जन करना चाहिए।

वात्स्यायन के मुताबिक जन्म से लेकर 16 साल तक की उम्र को बाल्यावस्था, 16 साल से लेकर 70 साल तक की उम्र युवावस्था और इसके बाद की उम्र को वृद्धावस्था कहते हैं। इसी वजह से बाल्यावस्था में विद्या ग्रहण करनी चाहिए। युवावस्था में अर्थ और काम का उपार्जन तथा उपभोग करना चाहिए।

इसके बाद बुढ़ापे की अवस्था में मोक्ष और धर्म की प्राप्ति के लिए प्रयास करना चाहिए। इसके बावजूद आचार्य वात्स्यायन का कहना है कि जिंदगी का कोई भरोसा नहीं है। शरीर मिट्टी है इसी कारण से किसी भी समय और जब भी संभव हो जिन-जिन पुरुषार्थों की प्राप्ति हो सके कर लेनी चाहिए।

अब एक सवाल और उठता है कि जीवन को माया (जिसका कोई भरोसा नहीं होता) समझकर बाल्यावस्था में ही काम का उपार्जन और उपभोग करने की सलाह आचार्य वात्स्यायन देते हैं। इस बारे में किसी तरह की शंका आदि न पैदा हो इस वजह से उन्होंने स्पष्ट किया है-

धर्म शास्त्रकारों में इंसान की उम्र को 4 भागों में बांटा है लेकिन आचार्य वात्स्यायन के मुताबिक इसकी 3 अवस्थाएं बताई हैं। उन्होंने अपने विचारों में प्रौढ़ावस्था का जिक्र नहीं किया है। दूसरे आचार्य सन्यास लेने की सही उम्र 50 साल के बाद की मानते हैं लेकिन आचार्य वात्स्यायन ने इसकी सही उम्र 70 साल के बाद की बताई है।

विद्या ग्रहण करने की उम्र में ब्रह्मचर्य का पालन पूरी सख्ती और निष्ठापूर्वक करना चाहिए।

आचार्य कौटिल्य के मुताबिक मुंडन संस्कार हो जाने पर गिनती और वर्णमाला का अभ्यास करना चाहिए। उपनयन हो जाने के बाद अच्छे विद्वानों तथा आचार्य से त्रयी विद्या लेनी चाहिए। 16 साल तक की उम्र तक बहुत ही सख्ती से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए और इसके बाद विवाह के बारे में सोचना चाहिए। विवाह के बाद अपनी शिक्षा को बढ़ाने के लिए हर समय बढ़े-बढ़ों के साथ में रहना चाहिए क्योंकि ऐसे लोगों की संगति ही विनय का असली कारण होती है।

वात्स्यायन और कौटिल्य दोनों ही ने जीवन की शुरुआती अवस्था अर्थात् बाल्यवस्था में विद्या ग्रहण करने और ब्रह्मचर्य पर जोर दिया है क्योंकि विद्या और विनय के लिए इन्द्रिय जय होती है इसलिए काम, क्रोध, लोभ, मान, मद और हर्ष जान से अपनी इन्द्रियों पर विजय पानी चाहिए।

**१८ोक (७)- अलौकिकत्वादृष्टार्थत्वादप्रवृत्तानां यजदीनां शास्त्रात्प्रवर्तनम्, लौकिकत्वादृष्टार्थत्वात्त्र प्रवृत्तेभ्यश्च  
मांसभक्षणादिभ्यः शास्त्रादेव निवारणं धर्मः॥**

अर्थ- जो लोग पारंपरिक तथा अच्छा फल देने वाले यज्ञ आदि के कामों में जल्दी शामिल नहीं होते ऐसे लोगों का शास्त्र के आदेश से इस तरह के कार्यों में शामिल होना तथा इसी जन्म में अच्छा फल मिलने के कारण जो लोग मांस आदि खाते हैं उनका शास्त्र के आदेश से यह सब छोड़ देना- यही प्रवृत्ति तथा निवृत्ति रूप में 2 प्रकार का धर्म है।

महाभारत में भी इस बारे में बताया गया है धारण करने से लोग इसे धर्म के नाम से बुलाते हैं। धर्म प्रजा को धारण करते हैं जो धारण के साथ-साथ रहता है वही धर्म कहलाता है- यह निश्चित है।

इस बात से यह साबित हो जाता है कि धर्म बहुत ही व्यापक शब्द है। ग्रंथकोश में धर्म के अर्थ मिलते हैं।

वैदिक विधि, यज्ञादि

सुकृत या पुण्य

न्याय

यमराज

स्वभाव

आचार

सोमरस का पीने वाला और

शास्त्र विधि के अनुसार कर्म के अनुष्ठान में पैदा होने वाले फल का साधन एवं रूप शुभ अद्वितीय अथवा पुण्यापुण्य रूप भाग्य।

श्रौत और स्मृति धर्म।

विहित क्रिया से सिद्ध होने वाले गुण अथवा कर्मजन्य अद्वितीय।

आत्मा।

आचार या सदाचार।

गुण।

स्वभाव।

उपमा।

यज्ञ।

अहिंसा।

उपनिषद्।

यमराज या धर्मराज।

सोमाध्याची।

सत्संग।

धनुष।

ज्योतिष में लग्न से नौवें स्थान या भाग्यभवन।

दान।

न्याय।

धर्म शब्द का अर्थ निरुक्तकार नियम को बताया गया है और धर्म शब्द का धातुगत अर्थ धारण करना होता है। इन दोनों अर्थों का तालमेल करने से यही अर्थ निकलता है कि जिस नियम ने इस संसार को धारण कर रखा है वह धर्म ही है।

शास्त्रों के अनुसार धर्म से ही सुख की प्राप्ति होती है और लोकमत भी इस बारे में शास्त्रों का समर्थन करता है। धन से धर्म होता है और धर्म से ही सुख मिलता है।

#### १८ोक (8)- तं श्रुतेर्धर्मज्ञसमवायाच्च प्रतिपद्येत॥

अर्थ- उपयुक्त सातवें सूत्र में बताए गए धर्म को जानी मनुष्य वेद से और साधारण पुरुष धर्मज्ञ पुरुषों से सीखें।

कामसूत्र के रचियता ने शास्त्रों के मत पर सहमति जताते हुए कहा है कि जानी मनुष्य को वेदों के द्वारा धर्म की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। मनु के अनुसार सारे वेद धर्म के मूल हैं।

श्री मद्धगवत्पुराण में तो यहां तक कहा गया है कि जो वेद में कहा गया है वही धर्म है और जो उसमें नहीं कहा गया है वह अर्थमें है।

आचार्य वात्स्यायन ने जानी व्यक्तियों को वेदों से धर्म आचरण सीखने की सलाह इसलिए दी है क्योंकि धर्म का तत्व गुहा में मौजूद होता है। इसी तत्व को प्राप्त करने के लिए मनुष्य को आत्म-निरीक्षण, श्रवण, मनन और निदृश्यासन करना जरूरी है। जानी वही होता है जो निहित प्रच्छन्न तत्वों को पहचानता है। कामसूत्र का मुख्य धर्म काम का असली विवेचन और विश्लेषण करना ही है। काम के तत्व को वहीं मनुष्य पहचानता है जो धर्म के तत्व को पहचानता है।

यहां पर साधारण पुरुषों से अर्थ उन लोगों से हैं जो स्वयं वे वेदाध्ययन, श्रवण मनन में असमर्थ हैं, मगर स्मृतियों द्वारा बताए गए धर्मज्ञों द्वारा निर्दिष्ट पथ पर सवार रहते हैं। यहां पर कामसूत्र के रचियता स्मृति और श्रुति दोनों का समन्वय करते हैं। मतलब यह है कि श्रुति के द्वारा जो बताया गया है वही धर्म स्मृति में भी बताया गया है।

ऐसा वह कौन सा धर्म है जो स्मृति में बताया गया है तथा श्रुतिरागव है। इसका समाधान मनुस्मृति के अंतर्गत है।

श्रुति और स्मृति के अंतर्गत बताया गया सदाचार ही परम धर्म कहलाता है। इसलिए अपने आपको पहचानने वाले व्यक्ति को हमेशा सदाचार से युक्त ही रहना चाहिए।

आचार्य वात्स्यायन ने बहुत ही कम शब्दों में बहुत बड़ी बात कही है कि विद्वान् और सामान्य दोनों तरह के लोगों के लिए यह बहुत जरूरी है कि वह सदाचारी बन जाए क्योंकि सदाचार ही काम की पृष्ठभूमि है।

#### १९ोक (9)- विद्याभूमिहिरण्यपशुधान्य भाण्डोपस्करमित्रादीनामर्जनमर्जितस्य विवर्धनमर्थः॥

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन ने धर्म के लक्षण बताने के बाद अर्थ की परिभाषा को पेश किया है-

विद्या, भूमि, सौना, जानवर, बर्तन, धन आदि घर की चीजें और मित्रों तथा कपड़ों, गहनों, घर आदि चीजों को धर्मपूर्वक प्राप्त करना तथा प्राप्त किए हुए को और बढ़ाना अर्थ है।

आचार्य चाणक्य ने कौटलीय अर्थशास्त्र के अंतर्गत अर्थ की परिभाषा बताते हुए बताया है कि लोगों की जीविका ही अर्थ है।

इस विषय में कौटल्य और वात्स्यायन का एक ही मत है। कौटल्य ने अर्थशास्त्र लिखने का अर्थ तत्व दर्शन को बताया है तथा यही अर्थ कामसूत्रकार का भी है।

जिस प्रकार से बुद्धि का संबंध धर्म से है उसी तरह से शरीर का संबंध अर्थ से, काम का संबंध मन से और आत्मा का संबंध मोक्ष से है। इन्हीं अर्थ, धर्म, मोक्ष और काम में मनुष्य की सभी लौकिक और परलौकिक कामनाओं का समावेश हो जाता है।

कामसूत्रकार का मन्तव्य यही मालूम पड़ता है कि जिस तरह अर्थ, वस्त्र, भोजन आदि के बिना शरीर बिल्कुल सही नहीं रह सकता, संभोगकला के बिना शरीर पैदा नहीं हो सकता और शरीर के बिना मोक्ष को पाना संभव नहीं हो सकता। उसी तरह से बिना मोक्ष का रास्ता निर्धारित किए बिना काम और अर्थ को भी सहायता नहीं मिल सकती है। जब तक मोक्ष की सच्ची कामना नहीं की जा सकती तब तक अर्थ और काम का सही उपयोग नहीं हो सकता।

#### १०क (10)- तमध्यक्षप्रचाराद्वारासमयविद्धयो वणिभयश्चेति॥

अर्थ- अर्थ को सीखने के बारे में जो बताया जा रहा है उसे जानने में अक्सर बहुत से टीकाकारों को वहम होता है। कामसूत्र के रचयिता का अध्यक्षप्रचार से अर्थ कौटल्य अर्थशास्त्र के अध्यक्षप्रचार अधिकरण से है। इस अधिकरण के अंदर कौटल्य ने भूमि-संरक्षण, राज्य-संरक्षण, नागरिकों के संरक्षण के नियम और दुर्गों के निर्माण का विधान, राजकर की वसूली, आय-व्यय विभाग के नियम तथा उसकी व्यवस्था, शासन प्रबंध रत्न की पारखी, धातुओं के पारखी, सुनारों के कर्तव्य और नियम, कठोर तथा उसके अध्यक्ष के कार्य विक्रय विभाग के नियम, युवतियों की सुरक्षा, तोलमाप का निरूपण, शस्त्रागार की व्यवस्था, चुंगी के विभिन्न प्रकार के नियम आदि 36 विषयों के बारे में बताया गया है।

#### ११क (11)- श्रोत्रत्वकचक्षुजिह्वाधाराणानामात्मसंयुक्तेन मनसाधिष्ठतानां स्वेषु स्वेषु विषयेष्वानुकूल्यतः प्रवृत्तिः कामः॥

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन ने काम के लक्षण बताते हुए कहा है कि आंख, जीभ, कान, त्वचा और नाक पांचों की इंद्रियों की इच्छानुसार शब्द स्पर्श, रूप और सुगंध अपने इन विषयों में प्रवृत्ति ही काम है या फिर इन्द्रियों की प्रवृत्ति है।

भारतीय दर्शन के सिद्धान्त के अनुसार विद्या और अविद्या यहीं दो प्रमुख बीज हैं। यह दोनों जब बराबर मात्रा में एकसाथ मिलते हैं तब तीसरा बीज भी पैदा हो जाता है। वाक, मन और प्राण तीनों अव्यव तथा जगत के साक्षी माने जाते हैं। इनमें से मन को ज्यादा मात्रा में प्राण ग्रहण करता है तब वह विद्या का रूप ले लेता है और जब वह वाक को ज्यादा मात्रा में लेता है तब अविद्या कहलाता है। यहीं अविद्या विद्यारूप आत्मा का ऐसा स्वाभाविक विकार है जो कि बाहर के पदार्थों को अपने में मिला लिया करता है जिसके कारण से ज्ञान निविर्षयक तथा सविषयक इन रूपों में बंट जाता है।

#### १२क (12)- स्पर्शविशेषविषयात्वस्याबिमानिकसुखानुविद्धा फलवत्यर्थप्रतीतिः प्राधान्यात्कामः॥

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन ने इस सूत्र में काम के बारे में बताते हुए कहा है कि आलिंगन, चुंबन आदि संभोग सुख के साथ गोल, नितंब, स्तन आदि खास अंगों के स्पर्श करने से आनंद की जो झलवती प्रतीत होती है उसकी को काम कहते हैं।

इस सूत्र में फलवती अर्थप्रतीति: इस शब्द में गंभीर भाव मौजूद है। इसका खास मकसद सुयोग्य संतानोप्दान ही समझना सही होगा क्योंकि वेद और उपनिषद भी इसी आशय को व्यक्त करते हैं-

1- आरोहतल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनस्य पत्ये अस्मै।

इन्द्राणीव सुवृधा बुद्ध्यमाना ज्योतिरुग्मा उपसः प्रतिजागरासि॥

अर्थ- हे वधू त् खुश होकर इस पलंग पर लेट जा और अपने इस पति के लिए संतान को पैदा कर तथा इंद्राणी की तरह हे सौभाग्यवती चतुरता से सुबह सूरज निकलने से पहले ही जाग जा।

अर्थात्- संभोग क्रिया रात के समय ही होनी चाहिए जिससे मन में किसी तरह का डर, संकोच या शर्म आदि महसूस न हो।

2- देवा अग्रे न्यपद्यन्त पत्नीः समस्पृशन्त तन्वस्तनूभिः।

सूर्यव नारि विश्वरूपा महित्वा प्रजावती पत्या संभवे ह॥

अर्थ- विद्वान पुरुष पहले भी अपने पत्नी को प्राप्त हुए हैं तथा अपने शरीर को उनके शरीर से अच्छी तरह से मिलाया है। इस वजह से हे महान सुंदरता वाली तथा प्रजा को प्राप्त करने वाली स्त्री तू भी अपने पति से मिल जा।

अर्थात्- संभोग क्रिया करने से पहले आलिंगन और चुंबन आदि जरूरा कर लेने चाहिए जिससे कि दोनों को ही आनंद की प्राप्ति हो सके और आलिंगन करने से शरीर में जो बिजली सी दौड़ती है उससे न सिर्फ शर्म ही दूर होती है बल्कि एक अजीब सा ,सुकून भी मिलता है।

3- तां पूषं छिवतमामरेयस्व यस्यां बीजं मनुष्यां वपन्ति

या न ऊरु विश्रयाति यस्यामुश्नतः प्रहरेम शेषः॥

अर्थ- हे जग को पालने वाले ईश्वर, जिस स्त्री के अंतर्गत आज बीज को बोना है उसे जागृत करा। जिसके द्वारा वह हमारी इच्छा करती हुई अपनी जांघों को फैलाती हुई तथा हम इच्छा करते हुए अपने लिंग का प्रहार स्त्री की योनि पर कर सके।

अर्थात्- पुरुष और स्त्री दोनों को ही अपनी खुशी से संभोग क्रिया करनी चाहिए। इस क्रिया को करते समय दोनों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि स्त्री के योनि पथ को किसी तरह की हानि न पहुंचे क्योंकि स्त्रियों की योनि में एक बहुत ही बारीक झिल्ली होती है जो अक्सर पहले ही संभोग में टूट जाती है। इसलिए पुरुष को खासतौर पर ध्यान रखना चाहिए कि स्त्री को किसी प्रकार की परेशानी न हो।

4- प्रत्वा मुञ्जामि वरुणस्य पाशाद् येन त्वा सविता सुशेवा:।

ऊरु लोकं सुगमत्रपन्थां कृणोमि तुभ्यं सहपल्यै वधु॥

अर्थ- हे स्त्री मैं तेरे पति के जरिए जांघों के बीच के योनिमार्ग को सरल बनाता हूं तथा तूँगे वरुण के उस उत्कृष्ट बंधन से मुक्त करता हूं जिसको सविता ने बांधा था।

अर्थात्- संभोग करते समय जो प्राकृतिक आसन होते हैं उन्हीं को आजमाना चाहिए क्योंकि अप्राकृतिक आसनों को संभोग करते समय आजमाने से संतान विकलांग पैदा होती है।

5- आ रोहोरुमुपर्धत्स्व हस्त परिष्वजस्व जायां सुमनस्यामानः।

प्रजा कृणवाथामिह मोदमानौ दीर्घ वामायुः सविता कृणोतु॥

अर्थ- हे पुरुष तू जांघ के ऊपर चढ़ जा, मुङ्गे अपनी बांहों का सहारा दें, खुश होकर पत्नी को चिपका लें तथा खुशी मनाते हुए दोनों संतानों को पैदा करो जिसे सविता देव तुम्हारी उम्र को लंबी बनाए।

अर्थात्- संभोग क्रिया के संपन्न होने के बाद स्त्री और पुरुष दोनों को ही स्नान कर लेना चाहिए क्योंकि इससे किसी शरीर को किसी तरह के रोग और गंदगी से मुक्ति मिलती है।

6- यद् दुष्कृतं यच्छमलं विवाहे वहतौ च यत्।

तत् संभलस्य कंबले मृज्महे दुरितं वयम्॥

अर्थ- इस वैवाहिक कार्य के द्वारा जो मलिनता हम दोनों से हुई उस कंबल के दागों को हमें छुड़ा लेना चाहिए।

अर्थात्- इस बात से साफ पता चलता है कि आचार्य वात्स्यायन ने चुबन, आलिंगन से फलवती अर्थ प्रतीति का अर्थ संतान को पैदा करने की दृष्टि रखकर ही इस सूत्र की रचना की है।

श्लोक (13)- तं कामसूत्रात्रागरिकजनसमवायाच्च प्रतिपद्येत॥

अर्थ- उस कामविज्ञान को कामसूत्र जैसे शास्त्रों से और काम व्यवहार में निपुण नागरिकों के हासिल करना चाहिए।

कामसूत्र के रचियता अर्थात् आचार्य वात्स्यायन ने कहा है कि कामशास्त्रों का अध्ययन कामसूत्र के जैसे आचार्यों को आकर ग्रन्थों से ही करना चाहिए या किसी योग्य नागरिक से। यहां पर शास्त्र और आचार्य दोनों की ही महतवता बताई गई है। अगर किसी भी विषय को जानना है या उसपर योग्यता हासिल करनी है तो किसी शास्त्र और आचार्य की शरण लेनी चाहिए। गीता में कहा गया है कि जो मनुष्य शास्त्र विधि को छोड़कर इधर-उधर भागता है वह न तो सिद्धि प्राप्त कर सकता है और न ही लौकिक सुख को ही ग्रहण कर सकता है। वह कभी मोक्ष को भी पा नहीं सकता है।

श्लोक (14)- यः शास्त्रविधिमृत्सूज्य वर्तते कामकारतः। न स सिद्धिमवाप्नोति न सुख न परांगतिम॥

अर्थ- यहां पर कामशास्त्राकार का नागरिक जन से अर्थ है कि विद्यधर्मजन अथवा कामशास्त्र का आचार्य। आचार्य वही होता है जो अपने शिष्यों को ऐसी शिक्षा दे कि वह धर्म-अर्थ-काम को आसानी से प्राप्त कर सके। उपनिषद का जाता अपने शिष्य को पूरी तरह से शिक्षा देने के बाद उसे उपदेश देता है-

श्लोक- सत्य वद, धर्म चर स्वाध्यायान्मा प्रमदः प्रजाततुमा व्यवच्छवेत्सीः।

अर्थ- धर्म का पालन करो, हमेशा सच बोलो, अप्रमत्त होकर स्वाध्याय करते रहो।

गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने के बाद संतान परंपरा को नहीं तोड़ना चाहिए।

संतान परंपरा को टूटने से बचाने के लिए ब्रह्मचारी को गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने से पहले विधि पूर्वक कामशास्त्र का अध्ययन कर लेना चाहिए। इसके बाद विवाह करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करना चाहिए।

अर्थ, धर्म और काम के लक्षण तथा उनको पाने के साधन बताकर वात्स्यायन इनकी उत्तरोत्तर उत्कृष्टता तथा प्रामाणिकता को बता रहे हैं-

एषां समवाये पूर्वः पूर्वो गरीयान्॥

अर्थ- काम, अर्थ और धर्म में से काम से ज्यादा श्रेष्ठ अर्थ को माना गया है तथा अर्थ से धर्म को।

सत्य, असत्य, अहिंसा, काम-क्रोध, लोभ से रहित होना, प्राणियों की प्रिय तथा हितकारिणी कोशिश में तैयार करना- यह सभी वर्णों के सामान्य धर्म माने जाते हैं।

समाज व्यवस्था और सहस्तित्व को अहिंसा ही कायम रखती है। संसार में जो कुछ भी है वह सत्य है। इसी प्रकार सत्य सर्वोपरि धर्म है तथा अहिंसा को अपनाना चाहिए। अहिंसा को छोड़ देने पर सच्चाई भी हाथ नहीं लगती।

चोरी न करने को ही अस्तेय कहा जाता है। अस्तेय सत्य का ही एक भाग है। सच के इसी भाग पर समाज का व्यवहार आधारित है।

जब जरूरत से ज्यादा वस्तुओं का उपयोग करने की इच्छा नहीं होती है तो उसे अकाय कहते हैं अर्थात मनुष्य को अपनी इच्छाएं और जरूरतों को सीमित ही रखना चाहिए।

अहिंसा के दूसरे रूप में अक्रोध को जाना जाता है। हर व्यक्ति को अपने अंदर के कोध को जानना बहुत जरूरी है।

सर्वभूतहित की भावना मनुष्य के जीवन को ऊपर उठाने में सबसे ऊपर मानी जाती है। अहिंसा, अक्रोध और अकाम आदि सभी इसके अंतर्गत आते हैं। सर्वात्मभाव हमारी जिंदगी का मकसद होना चाहिए तथा सर्वभूतहित हमारी साधना होनी चाहिए।

आचार्य वात्स्यायन ने इन्हीं वजहों से काम से बेहतर अर्थ और धर्म को माना है। जो मनुष्य धर्म की इन भूमिकाओं को स्वीकार कर लेता है उसके लिए काम और अर्थ करतल गत माने जाते हैं।

आचार्य वात्स्यायन का मुख्य मकसद कामशास्त्र की महत्वता की व्याख्या तथा उसकी व्यवहारिक उपयोगिता व्यक्त करना है। मगर जब तक मनुष्य धर्म के तत्व को नहीं जानता तब तक वह काम की दहलीज पर नहीं पहुंच सकता है।

**१८०क (१५)- अर्थश्च राजः। तन्मूलत्वाल्लोकयात्रायाः। वेश्यायाश्चेति त्रिवर्गप्रतिपत्तिः॥**

अर्थ- इस तरह के साधारण नियम के बाद काम, धर्म और अर्थ के विशेष नियमों का उल्लेख करते हैं। सांसारिक जीवन का अर्थ मूल सूत्र माना जाता है। इस वजह से राजा के लिए काम और धर्म से ज्यादा जरूरी अर्थ होता है। वेश्या के लिए सबसे ज्यादा काम और अर्थ की जरूरत होती है। काम, धर्म और अर्थ के लक्षण तथा उनकी प्राप्ति के साधन खत्म होते हैं।

चाणक्य के अनुसार-

धर्मस्य मूलमर्थ- धर्म का मूल धर्म है।

अर्थस्य मूलराज्यम्- अर्थ काम मूल राज्य है।

राज्यमूलनिन्द्रयजय- राज्य का मूल इन्द्रिजय है।

कौटल्य के द्वारा राजा की अर्थ प्रधान वृत्ति होनी चाहिए। उसके द्वारा वह राज्य तथा धर्म दोनों को उपलब्ध कर सकता है तथा राज्य को भी मजबूत बना सकता है। कौटल्य के इन विचारों से आचार्य वात्स्यायन के विचार बहुत ज्यादा मिलते-जुलते हैं।

**१८०क (१६)- धर्मस्यालौकिकत्वात्तदभिदायक शास्त्रं युक्तम्। उपायपूर्वकत्वादर्थासिद्धिः। उपायप्रतिपत्तिः शास्त्रात्।**

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन धर्म का बोध करने वाले शास्त्र की जरूरत बताते हुए कहते हैं-

धर्म परमार्थ का संपादन करता है, इस प्रकार धर्म का बोध कराने वाले शास्त्र का होना जरूरी है तथा उचित भी। अर्थसिद्धि के लिए कई तरह के उपाय करने पड़ते हैं इस वजह से इन उपायों को बताने के लिए अर्थशास्त्र की जरूरत होती है।

धर्म का ज्ञान 3 प्रकार से होता है- पहला तो धर्मात्मा विद्वानों की शिक्षा, दूसरा आत्मा की सच्चाई को जानने की इच्छा और तीसरा परमात्मा प्राकेत विद्-विद्या का ज्ञान। अर्थवैद धर्म का लक्षण बताते हुए कहता है-

यज्ञ, दम, शम, दान और प्रेमभक्ति से तीनों लोकों में व्यापक ब्रह्म की जो उपासना की जाती है उसे तप कहा जाता है। तत्त्व मानने, सत्य बोलने, सारी विद्याओं को सुनने, अच्छे स्वभाव को धारण करने में लीन रहना ही तप होता है।

सत्य को ऋत भी कहते हैं। सच्चे भाषण और सत्य की राह पर बढ़ने से बढ़कर कोई भी धर्म नहीं है क्योंकि सत्य से ही रोजाना मोक्ष सुख और सांसारिक सुख मिलता है।

मनु, अत्रि, विष्णु, हारित, याज्ञवल्क्य, यम, संवर्त, कात्यायन, पराशर, व्यास, बृहस्पति, शंख लिखित दक्ष, गौतम, शातातप वशिष्ठ समेत यह सारे ऋषि धर्मशास्त्र को रचने वाले हैं। इन सभी धर्मशास्त्रारों ने यही बताया है कि यज्ञ करना, इन्द्रियों पर काबू करना, सदाचार, अहिंसा, दान, वेदों का स्वाध्याय करना यही परम धर्म होता है।

धर्म का मकसद सिर्फ इतना ही होता है कि विषयोचित वृत्तियों का निरोधकर आत्मज्ञाम प्राप्त करा जाए। इस वजह से वात्स्यायन ने धर्म को पारमार्थिक कहा है।

धर्म और मोक्ष से ज्यादा अर्थ के क्षेत्र को ज्यादा व्यापक माना जाता है। जिस तरह से आत्मा के लिए मोक्ष की, बुद्धि के लिए धर्म की तथा मन के लिए काम की जरूरत होती है। इसी तरह शरीर के लिए भी अर्थ की जरूरत होती है। मनुष्य को ही धर्म और मोक्ष की जरूरत पड़ती है लेकिन काम तथा अर्थ के बिना तो मनुष्य पशु, पक्षी, कीड़े-मकोड़े तथा तृण पल्लव किसी का भी गुजारा नहीं हो सकता। काम के बिना भी एकबार काम चल सकता है और मनोरंजन को भी त्यागा जा सकता है।

जिस अर्थ पर प्राणिमात्र के शरीर स्थिर है, सभी की जिंदगी ठहरी हुई है, उस अर्थ की प्रधानता का अंदाजा अनायास किया जा सकता है। उसकी मिमांसा भी बहुत सावधानी के साथ करना चाहिए क्योंकि उसके अनुचित संग्रह के द्वारा मोक्ष मार्ग बिगड़ सकता है। आर्य सभ्यता में इस वजह से अर्थ की महत्वता स्वीकार करते हुए अर्थशास्त्रों की रचनाएं हुई हैं।

जीवन की हर समस्या का हल अर्थशास्त्र के द्वारा सभी दृष्टियों से किया जा सकता है। ज्ञान को पाने तथा उसकी सुरक्षा के लिए प्राचीन आचार्यों ने जितने भी अर्थशास्त्रों की रचना है, अक्सर उन सभी को इकट्ठा करके कौटल्य ने कौटलीय अर्थशास्त्र की रचना की है, इस कौटलीय अर्थशास्त्र की लेखनप्रणाली को अपनाकर वात्स्यायन ने कामसूत्र की रचना की है।

आपस्तंब धर्मसूत्र में अर्थ तथा धर्म में कुशल राजपुरोहित तक का विवरण है। धर्मसूत्रों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय धर्म अथवा विधान ही है लेकिन अर्थशास्त्र के अंतर्गत सभी आर्थिक सिद्धांतों तथा नियमों को बताया गया है।

अर्थशास्त्र का खास विषय राजनीति है। मनुष्य के सभी लौकिक कल्याणों का स्वरूप अर्थशास्त्र के अंतर्गत मौजूद है। इसलिए जीवन के सभी प्रयोजनों की सिद्धि अर्थशास्त्र के अंतर्गत दी गई है।

### १८ोक (17)- तिर्यग्योनिष्वपि तु स्वयं प्रवत्त्वात् कामस्य नित्यत्वाच्च न शास्त्रेण कृत्यमस्तीत्याचार्यः॥

अर्थ- पशु-पक्षी को अक्सर बिना कुछ सिखाए ही संभोग क्रिया करते हुए देखा जा सकता है और काम के अविनाशी होने से यह साबित होता है कि इस विषय का शास्त्र बनाने की जरूरत नहीं है। यह कुछ आचार्यों का मत है-

### १८ोक (18)- संप्रयोगपराधीनत्वात् स्त्रीपुंसयोरुपायमपेक्षते॥

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन ने इसका समाधान करते हुए कहा है-

संभोग क्रिया करते समय हारने पर स्त्री और पुरुष को इस हार से बचने के लिए शास्त्र की अपेक्षा हुआ करती है।

जो लोग धर्म के व्यापक रूप को, उसके प्रच्छन्न राज को समझने की कोशिश नहीं करते हैं वही कामशास्त्र का विरोध करते हैं। संभोगक्रिया को स्वाभावसिद्ध मानकर संभोगक्रिया में व्यक्ति और जानवर को बराबर मानने वाले नीतिकारों ने कामशास्त्र की उपयोगिता पर ध्यान नहीं दिया है।

लेकिन आचार्य वात्स्यायन कहते हैं कि संभोग करने के लिए शास्त्रज्ञान जरूरी इसलिए है कि अगर स्त्री या पुरुष दोनों में से कोई भी भयभीत, लज्जान्वित या हारता है तो उसको उपायों की जरूरत होती है। इन उपायों को शास्त्र के अंतर्गत बताया गया है। संभोग सुख या वैवाहिक जीवन को खुशहाल बनाने के लिए संभोग की 64 कलाओं की जरूरत होती है।

अर्थशास्त्र या धर्मशास्त्र के द्वारा ऐसी कलाओं और उपायों का ज्ञान नहीं होता। इस वजह से आचार्य वात्स्यायन यह ज्ञान देते हैं कि गृहस्थ जीवन को सुखी, संपन्न और आनंददायक बनाने के लिए कामसूत्र की जानकारी जरूर होनी चाहिए।

कामशास्त्र के द्वारा इस बात की जानकारी मिलती है कि संभोग क्रिया का सर्वोत्तम तथा आध्यात्मिक उद्देश्य है पति-पत्नी में आध्यात्मिकता, मानव प्रेम तथा परोपकार और उदात्त भावनाओं का विकास। इस मक्षसद का ज्ञान पशु-पक्षियों, कीड़े-मकोड़े को नहीं हो सकता। जो लोग संभोग के बारे में नहीं जानते वह जानवरों की तरह संभोग किया करते हैं।

कामसूत्र के द्वारा मनुष्य को इस बात का ज्ञान होता है कि संभोग का असली सुख क्या है। यह सुख इस प्रकार से है-

मनुष्य जाति का उत्तरदायित्व।

संभोग, संतान पैदा करना, जननेन्द्रिय और काम से संबंधित समस्याओं के प्रति आदर्शमय भाव।

अपनी सहभागी के प्रति उच्चभाव, अनुराग, श्रद्धा और भले की कामना से इन तीनों पर निर्भर रहे।

दम्पत्य प्रेम या अपनी प्रेमिका की आत्मियता के बिना विवाह करना या प्रेम करना असफल होता है। दम्पतियों के बीच में आपसी क्लेश, संबंधों का टूटना, अनबन, गुप्त व्यभिचार, वेश्यावृत्ति, स्त्री का अपहरण, अप्राकृतिक व्याभिचार आदि बहुत से बुरे परिणामों और घटनाओं का असली कारण कामसूत्र को पसंद न करना या उसके बारे में जानकारी होना है।

१८ोक (19)- सा चोपायप्रतिपत्तिः कामसूत्रादिति वात्स्यायनः॥

अर्थ- पति-पत्नी के धार्मिक और सामाजिक नियम की शिक्षा कामसूत्र के द्वारा मिलती है। जो दम्पति कामशास्त्र के मुताबिक अपना जीवन व्यतीत करते हैं उनका जीवन यौन-दृष्टि के पूरी तरह सुखी होता है। ऐसे दम्पति अपनी पूरी जिंदगी एक-दूसरे के साथ संतुष्ट रहकर बिताते हैं। उनके जीवन में पत्नीव्रत या पतिव्रत को भंग करने की कोशिश या आकांक्षा कभी पैदा ही नहीं हुआ करती है तथा उपायों द्वारा प्राप्त वह ज्ञान कामसूत्र से प्राप्त होगा। यह वात्स्यायन का मत है।

कामसूत्र के द्वारा इस बात के बारे में जानकारी मिलती है कि संभोग की 3 मुख्य क्रियाएं होती हैं- विलास, सीत्कार और उपसर्ग। इनके अलावा 3 तरह के पुरुष, 3 प्रकार की स्त्रियां, 3 तरह का सम संभोग, 6 तरह का विषम संभोग, संभोग के 3 वर्ग, वर्ग भेद से 9 प्रकार के संभोग, काल भेद से 9 प्रकार के संभोग तथा संभोग के सभी 27 प्रकार हैं। संभोग करते समय पुरुष और स्त्री को कब और किस तरह का आनंद मिलता है, पहली बार संभोग करते समय किस तरह की परेशानी होती है, स्त्री पर स्खलन का क्या प्रभाव पड़ता है, संभोग करते समय विभिन्न प्रकार के आसनों से किस प्रकार के लाभ होते हैं।

जो लोग सेक्स क्रिया के बारे में नहीं जानते हैं वह अपनी पत्नी के साथ सेक्स करके उन्हे बहुत से रोगों की गिरफ्त में पहुंचा देते हैं। कामसूत्र द्वारा ऐसी बहुत सी विधियां पाई जाती हैं जो स्त्री और पुरुष को आपस में ऐसे मिला देती हैं जैसे कि दूध में पानी। इसलिए आचार्य वात्स्यायन के अनुसार संभोग के लिए शास्त्र उसी तरह जरूरी है जैसे अर्थ और धर्म के लिए होता है।

**१८ोक (20)- तिर्यग्योनिषु पुनरावृतत्वात् स्त्रीजातेश्च, ऋतो यावदर्थं प्रवृत्तेबुद्धिपूर्वकत्वाच्च प्रवृत्तीनामनुपायः प्रत्ययः॥**

अर्थ- स्त्री और पुरुषों में तो स्त्री जाति स्वाधीन और बंधनरहित होती है। जिसके कारण ऋतुकाल ही में वह तृप्त होती है। उसकी संभोग के प्रति रुचि होने से तथा विवेक बुद्धि न होने से पशु-पक्षियों के लिए स्वाभाविक संभोग की इच्छा ही काम-प्रवृत्तियों को पूरा करने के लिए सही उपाय है।

वात्सल्यायन के मतानुसार मनुष्य रूप में पैदा हुई स्त्री तथा तिर्यग्योनि में पैदा हुई चिडिया में काफी फर्क होता है। स्त्री चिडिया की तरह न तो आजाद होती है और न विवेकशून्य। वह समाज और वंश की मर्यादाओं से बंधी रहती है। इसके अंतर्गत लोकलज्जा, कुललज्जा तथा धर्मभय रहता है। इसलिए किसी खास तरह के पुरुष का किसी खास स्त्री के साथ संबंध होने से बहुत सी मुश्किलें पैदा हो सकती हैं।

पशु-पक्षियों की तरह मनुष्य की संभोग करने की इच्छा सिर्फ पाश्विक धर्म नहीं है। व्यक्ति को धर्म, अर्थ, संतान को पैदा करना, वंश को बढ़ाना जैसे कई तरह के मकसदों को सामने रखना पड़ता है।

इसके अलावा भी पशु-पक्षियों में भाई-बहन, माता-पिता के संबंधों का विवेक पैदा नहीं होता और न ही उनका दाम्पत्य जीवन पूरी जिंदगी रहता है। वैवाहिक जीवन को पूरी जिंदगी चैन से बिताने के लिए कामसूत्र की जरूरत होती है।

**१९ोक (21)- न धर्माश्चरेत्। एष्यल्फलत्वात्। सांशयिकत्वाच्च॥**

अर्थ- धर्म का आचरण कभी न करें क्योंकि भविष्य में मिलने वाला फल ही अनिश्चित होता है। उसके मिलने में भी शक रहता है।

**२०ोक (22)- को हयबालिशो हस्तगतं परगतं कुर्यात्॥**

अर्थ- कौन सा व्यक्ति इतना मूर्ख होता है जो हाथ में आई हुई चीज को दूसरे के हाथ में सौंप देगा।

**२१ोक (23)- वरमद्य कपोतः श्वो मयूरात्॥**

अर्थ- अगर वह सुख मिलना निश्चित भी हो तब भी यह लोकोक्ति चरितार्थ ही होती है- कल मिलने वाले मोर से आज मिलने वाला कबूतर ही अच्छा है।

**२२ोक (24)- वरं सांशयिकात्रिकादसांशयिकः कार्षपणः। इति लौकायातिकाः॥**

अर्थ- नास्तिक लोगों को मानना है कि कहना है कि असंदिग्ध रूप से मिलने वाला तांबे का बर्तन शंका से प्राप्त होने वाले सोने के बर्तन से अच्छा है।

आचार्य वात्सल्यायन के मतानुसार-

धर्मों का पालन जरूर करना चाहिए क्योंकि धर्म का उपदेश करने वाले वेद तथा शास्त्र ईश्वर कृत तथा मंत्रदृष्टा ऋषियों द्वारा बनाए गए हैं इसलिए वह निश्चय ही सही हैं।

शास्त्रों के अनुसार कहे गए अभिचार कार्यों और शांति, पुष्टिवर्द्धक कार्मों के फलों का एहसास इसी जन्म में हो जाता है।

नक्षत्र, सूर्य, चंद्र, तारागण तथा ग्रह-चक्रों की प्रवृत्ति भी लोगों की भलाई के लिए बुद्धिवाद-संपन्न जान पड़ती है।

मनुष्य का जीवन वर्णाश्रय धर्म पर आधारित है-

तत्र संप्रतिपत्तिमाह-

श्लोक (25) शास्त्रस्यानभिशंग-यत्वादभिचारानुव्याहारयोश्च कचित्फलदर्शनात्रक्षत्र-चंद्रसूर्यताराग्रहचक्रस्य लोकार्थं  
बुद्धिपूर्वकमिवप्रवेत्तर्दर्शनाद् वर्णाश्रमाचारस्थिति-लक्षणत्वाच्च लोकयात्राया हस्तगतस्य च बीजस्य भविष्यतः सस्यार्थं  
त्यागदर्शनाच्चरेद्धर्मानिति वात्स्यायनः॥

अर्थ- हाथ में आए हुए बीज को अनाज मिलने की आशा में त्याग देना बेवकूफी नहीं है क्योंकि बीज से ही अन्न पैदा होता है। उसी तरह भावी मोक्ष की आशा रखकर धार्मिक कार्यों को करना सही है क्योंकि धार्मिक कार्यों के जरिए ही मोक्ष के रास्ते खुलते हैं।

धर्म के आचरण के लिए वात्स्यायन वेद और शास्त्र को ईश्वरकृत और ऋषि प्रणीत कहकर इन्हे सच मानते हैं। इनकी सत्यता साबित होने पर वह धर्म को भी प्रामाणिक मानते हैं।

वेद ईश्वरकृत है- इसके प्रमाण स्वयं वैदिक ग्रंथ हैं-

श्लोक- अरे अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्।

यददग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वागिरसः॥

श्लोक- त्रयोर्वेदो वायोः सामवेदः आदित्यात्॥

त्रयो वेदा अजायन्त आग्नेयऋग्वेदः।

वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः॥

आग्नेयऋग्वेदो वायोर्यजूषि सामान्यादित्यात्।

तस्माथजात्सर्वहतः ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्माद्जायत॥

यस्मिन्नृचः सामयजूषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभा विवाराः।

सस्माद्दद्यो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपारुषन्।

सामानि यस्य लोमान्यथर्वागिरसो मुखम्॥

अर्थ- ऊपर दिए गए उदाहरणों से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अर्थवेद की अपौरुखषेयता और ईश्वरदत्तता साबित होती है। विधि और मंत्र जिसके अंतर्गत आते हैं वही वेद होते हैं। मीमांसा दर्शन ने इस बात पर अपने विचार प्रकट किए हैं कि प्रेरणादायक लक्षण वाला अर्थ ही धर्म है। विधि तथा मंत्र का एक ही अर्थ है क्योंकि प्रेरणात्मकों को मंत्र कहते हैं।

इसके द्वारा आचार्य वात्स्यायन के इस मत की पुष्टि हो जाती है वेद ईश्वरीय ज्ञान है तथा उनमें धर्मोपदेश है।

यहां पर वात्स्यायन का अर्थ शास्त्र से मतलब धर्मशास्त्र है। धर्मशास्त्र में यादों को प्रमुख माना जाता है। मनु, याजवल्क्य आदि साक्षात् कृतधर्मा ऋषि-मुनियों ने यादों में जो धर्म के उपदेश दिए हैं वह सार्वकालिक तथा सार्वजनीन है। उनका धर्म उपदेश यथार्थ की पृष्ठभूमि पर सामाजिक अन्युदय तथा पर लौकिक कल्याण के लिए हुआ है। इस प्रकार यादें सच हैं, उनके द्वारा बताए गए रास्ते पर धर्म का आचरण करना सही है।

मनुष्य जो भी शुभ या अशुभ कार्य करता है शास्त्रों के द्वारा उसका फल उसे इसी जिंदगी में भुगतना पड़ता है। मीमांसा के अनुसार श्रुति के द्वारा जिन कार्यों को करने की आज्ञा मिलती है, वह रोजाना, नैमित्तिक तथा काम्य 3 तरह के होते हैं। होम करना रोजाना का काम है। नैमित्तिक कार्मों को किसी खास मौकों पर किया जाता है। यह दोनों आदेश के रूप में होते हैं और इनको करना जरूरी होता है। उत्तेजित कार्यों को खास किस्म की इच्छाओं को पूरा करने के लिए किया जाता है। हर कार्य में कुछ अंश प्रधान तथा कुछ अंश गौण होते हैं।

यज्ञ होम का प्राकृतिक और लाभकारी फल वायुमंडल की शुद्धि है। जलती हुई आग अपने ऊपर की ओर आस-पास की वायु को गर्म करके ऊपर की ओर धकेलती है। शून्य को पूरा करने के लिए इधर-उधर से ठंडी हवा हवन-कुंड की तरफ खिंची आती है तथा गर्म होकर वह भी ऊपर आ जाती है। यह चक्कर चलता रहता है।

इस क्रिया में इधर-उधर उड़ते हुए, पड़े हुए खतरनाक जीव कुंड से गुजरते हुए भस्म हो जाते हैं। इस परिवर्तन क्षेत्र में जो कोई भी बदलाव होता है उससे वायुमंडल तुरंत ही शुद्ध होता है, मर्मों का पाठ यज्ञ करने वाले को समुन्नत बनाता है। मीमांसाकार के मत से यज्ञों का जो फल है उसका संबंध वर्तमान से है।

धर्म जिजासा पूर्वमीमांसा का विषय है तथा धर्म से वह कार्य अभिप्रेत है जिसकी विधियां वेदों में बताई जा चुकी हैं। इन कर्मों का फल जरूर मिलता है। यही नहीं कर्म अगर किए जाते हैं तो वह फल की प्राप्ति के लिए ही किए जाते हैं। मीमांसा के मतानुसार फल मनुष्य के लिए है और मनुष्य कर्म के लिए है। कर्म की प्रेरणा भले ही इसलिए की जाती है कि ऐसा कर्म कल्याणकारी होता है। हमारी नैतिक भावना की मांग यह है कि पुण्य काम तथा सुख का मेल हो। पाप और दुख का मेल हो। इस सिद्धान्त का पक्षपाती जेमिनी है। शुभ कार्मों के फल शुभ और अशुभ कार्मों के फल अशुभ मिलते हैं।

ग्रह, नक्षत्र आदि की प्रवृत्ति मनुष्य की भलाई की लिए ही होती है। श्रुति के मंत्र भाग के अंतर्गत कई स्थानों पर बताया गया है कि सूर्य ही सब प्रजाओं का प्राण है। सूर्य के द्वारा ही सभी प्राणियों की उत्पत्ति हुई है। विषुवत् वृत् तथा क्रांति वृत् का शरीर की बनावट के बहुत ही गहरा संबंध होता है। इस विषय के बारे में ऐतरेय ब्राह्मण में बताया गया है-

इस तरह प्रमाण से यह साबित हो जाता है कि मनुष्य की आत्मा अधेन्द्र अर्थात् इंद्र का आधा भाग है। अपूर्णता के रह जाने पर मनुष्य आदि प्राणियों का आत्मा इन्द्र अपने आपको अपूर्ण व अपर्याप्त समझता है क्योंकि अकेला प्राणी कभी भी संभोग नहीं कर सकता- तस्मादेकाली न रमते तद द्वितीयमैच्छत। वह मनोविनोद क्रीड़ा के लिए दूसरे प्राणी का इच्छा करता है। यह जीवन का नियम होता है।

इसलिए बहुत सी श्रुतियों का कहना है कि जब तक पुरुष दार-संग्रह विवाह नहीं करता तब तक उसे अधूरा ही माना जाता है। वाजिश्रुति का कहना है कि जिन दो स्त्री-पुरुषों का मिलन होता है वह तब तक पूरे नहीं हो सकते

जब तक एक अर्द्ध का दूसरे से मिथुन संबंध नहीं हो जाता है। यह स्त्री आधा भाग होती है। इस तरह से जब तक स्त्री को हासिल नहीं किया जा सकता तब तक सृष्टि नहीं हो सकती है।

आचार्य वात्स्यायन का यह कथन संकुचित और सीमित नजरिये से अलग ही मात्रम पड़ता है कि वर्णाश्रम धर्म पर ही लोगों को जीवन निर्भर करता है। उनके मतानुसार ब्राह्मणादि वर्ण सिर्फ मनुष्य में ही नहीं बल्कि पूरे संसार में वर्तमान चेतन-अचेतन सभी पदार्थ 4 वर्णों में बंटे हैं।

जो पदार्थ आग्नेय होते हैं वह ब्राह्मण कहलाते हैं। जो ऐन्द्र होते हैं वह क्षत्रिय होते हैं। जो विश्वदेव हैं वह वैश्य माने जाते हैं और पूष देवता के पदार्थों को शुद्र कहते हैं। सारे पदार्थ अग्नि, इंद्र, विश्वदेव और पूष देवता से अलग-अलग प्रकृति के पैदा होते हैं। इसलिए सारे पदार्थों में क्षत्रिय, ब्राह्मण आदि चारों विभाग होते हैं। मानव की इसी बुनियादी प्रकृति को ध्यान में रखकर आचार्य वात्स्यायन ने कामसूत्र में पुरुष और स्त्री का बंटवारा, गुण-कर्म, स्वभाव के मुताबिक करके उनके लिए संभोगकला का निर्देश दिया है।

धर्म को नैतिक जीवन की बुनियाद माना गया है। धर्म का आचरण कभी त्याज्य नहीं कहा जा सकता है। छान्दोग्य उपनिषद के द्वारा सन्तुमार का कहना है कि सुख में समग्र है, अल्प (थोड़े) में सुख नहीं है। नैतिक जीवन यज्ञ जैसा है और वह दूसरों को अपने अंदर मिला लेता है।

छान्दोग्य उपनिषद धर्म की उपमा वृक्ष से करते हुए कहते हैं- धर्म के 3 संकंध हैं-

दान, यज्ञ और अध्ययन पहला संकंध है।

तप दूसरा संकंध है।

ब्रह्मचारी का आचार्य कुल में तीसरा संकंध है।

दान देना, यज्ञ करना और वेदादि धर्मग्रंथों को पढ़ना मनुष्य का कर्तव्य बनता है। स्वाध्याय एक तरह का तप ही है। यज्ञ और दान वहीं मनुष्य कर सकता है जो कमाने की काबलियत रखता हो और जो कमाए उसमें से कुछ भाग दान देने की इच्छा रखता हो। अगर जीवन को सफल बनाना है तो उसके लिए तप जरूरी है। अच्छे आचरण जन्म लेते ही नहीं मिलते बल्कि उन्हे तो हमें दूसरों से लेना पड़ता है और इसके लिए हर मनुष्य को कोशिश करनी पड़ती है। यही कोशिश करने का समय ब्रह्मचारी आचार्य कुल में बिताता है जहां पर नैतिक आचार की बुनियाद पड़ती है।

वात्स्यायन के मतानुसार मनुष्य यज्ञ, तप, दान, स्वाध्याय और शुद्ध आचरण का परित्याग न करके रोजाना इनका उपयोग करता रहे।

**१८ोक (26)- नार्थाश्चरेत्। प्रयत्नतोऽपि हयेतेऽनुष्ठीयमाना नैव कदायित्म्युः अननुष्ठीयमाना अपि यद्दच्छया भवेयुः॥**

अर्थ- इसके अंतर्गत शास्त्राकार अर्थ प्राप्ति के संबंध में निम्नलिखित 5 सूत्रों द्वारा संदेह प्रकट करते हैं-

अर्थ को प्राप्त करने के लिए कभी भी प्रयत्न नहीं करना चाहिए क्योंकि कभी-कभी पूरी तरह प्रयत्न करने के बाद भी अर्थ प्राप्त नहीं होता और कभी-कभी बिना कोशिश के भी प्राप्त हो जाता है।

**१८ोक (27)- तत्सर्व कालकारितमिति॥**

अर्थ- क्योंकि यह सब कुछ समय पर निर्भर करता है।

**१८ोक (28)- काल एव हि पुरुषानर्थानर्थयोर्जयपराजययोः सुखदुःखयोश्च स्थापयति॥**

अर्थ- समय ही है जो मनुष्य को अर्थ और अनर्थ में, जय और पराजय में तथा सुख और दुख में रखता है।

**श्लोक (29)- कालेन बेलिरेन्द्रः कृतः। कालेन व्यपरोपितः। काल एव पुनरप्येनं कर्तेति कालकारणिकाः॥**

अर्थ- समय ही था जिसने बालि को इन्द्र के पद पर ला दिया और फिर समय ने ही उसे इन्द्र के पद से गिरा दिया। इस तरह समय ही सब कर्मों का कारण है।

**श्लोक (30)- पुरुषकारपूर्वक्त्वाद् सर्वं प्रवृत्तीनामुपायः प्रत्ययः॥**

अर्थ- आचार्य स्वयं ही निम्नलिखित 2 सूत्रों द्वारा अपनी ही शंका का हल कर रहे हैं-

लेकिन सब कामों के मेहनत द्वारा कामयाब होने के उपायों को समझ लेना भी काम साधन कारण है।

**श्लोक (31)- अवश्यभाविनोऽप्यर्थस्योपायपूर्वक्त्वादेव। न निष्कर्मणो भद्रमस्तीती वात्स्यायनः॥**

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन के मतानुसार किसी भी काम को कोशिश करने पर पूरा हो जाने के बाद यह साबित होता है कि निककमा आदमी कभी भी सुख को प्राप्त नहीं कर सकता।

आचार्य वात्स्यायन के इस सिद्धान्तवाद का समर्थन ऐतरेय ब्राह्मण के शुनः शेष आछ्यान के उस संचरण गीत से होता है जिसका अंतरा चरैति बैरैति है। इस गीत को इन्द्र ने पुरुष के वेश में आकर राजा हरिश्चंद्र के मृत्यु के मुंह में पहुंचे पुत्र को सुनाकर उसे लंबी जिंदगी प्रदान की थी।

आचार्य वात्स्यायन और ऐतरेय ब्राह्मण के विचारों की अगर एक-दूसरे से तुलना की जाए तो उससे यही पता चलता है कि चलने का नाम ही जीवन है, रुकने का नहीं। ऐसे लोग ही अर्थ की प्राप्ति कर सकते हैं। जीवन के रास्ते पर आलसी बन कर रुक जाना, थककर सो जाना बहुत बड़ी मूर्खता है। उपनिषदों में कहा गया है कि जो व्यक्ति अपने जीवन में किसी तरह के संकल्प पर अड़िग नहीं रहते वह कभी भी आत्मदर्शन नहीं कर सकते। जो मनुष्य पूरी तरह से डटकर अर्थ को प्राप्त करने की राह पर चल पड़ता है, इन्द्र भी उन्हीं के साथ हैं- इन्द्र इधरत सखा।

**श्लोक (32)- न कामाश्चरेत्। धर्मार्थयोः प्रधानयोरेवमन्येषां च सतां प्रत्यनीकत्वात्।**

**अनर्थजनसंसर्गमसद्वयवसायमशौचमनायतिं चैते पुरुषस्य जनयन्ति॥**

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन धर्म और अर्थ के बाद अब काम पर अपने मत दे रहे हैं-

काम का आचरण नहीं करना चाहिए क्योंकि यह प्रधानभूत धर्म तथा अर्थ और सज्जनों के विरुद्ध है। काम मनुष्य में बुरे आदमियों का संसर्ग, बुरे काम, अपवित्रता और कुत्सित परिणामों को पैदा किया है।

**श्लोक (33)- तथा प्रमादं लाघवमप्रत्ययमग्राहयतां च॥**

अर्थ- तथा काम-प्रमाद, अपमान, अविश्वास को पैदा करता है तथा कामी आदमी से सभी लोग नफरत करने लगते हैं।

**श्लोक (34)- बहवश्च कामवशगाः सगणा एव विनष्टाः श्रूयन्ते॥**

अर्थ- तथा ऐसा सुना जाता है कि बहुत से काम के वश में आकर अपने परिवार सहित समाप्त हो जाते हैं।

**श्लोक (35)- यथा दाण्डक्यो नाम ऋजः कामाद् ब्राह्मणकन्यामभिमन्यमानः सबन्धुराष्ट्रो विनाश॥**

अर्थ- जिस प्रकार भोजवंशी दांडक्य नाम का राजा काम के वश में होकर ब्राह्मण की कन्या से संभोग करने के कारण अपने परिवार और राज्य के साथ नष्ट हो गया।

**१८ोक (36)- देवराजश्चाहल्यामतिबलश्च कीचको द्रौपदी रावणश्च सीतामपरे चान्ये च बहवो ददश्यन्ते कामवशगा विनष्टा इत्यर्थचिंतकाः॥**

अर्थ- रावण सीता पर, इन्द्र अहल्या पर और महाबली कीचक द्रौपदी पर बुरी नजर रखने के कारण कामुक भाव रखने के कारण नष्ट हुए। ऐसे और भी बहुत से लोग हैं जो काम के वश में होकर नष्ट होते देखे गए हैं।

**१९ोक (37)- शरीरस्थितहेतुत्वादाहारसधर्माणो हि कामाः। धर्मार्थयोः॥**

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन अपने स्वयं के दिए हुए तर्क का समाधान करते हैं-

शरीर की स्थिति का हेतु होने से काम भोजन के समान है और धर्म तथा अर्थ का फलभूत भी यही है।

आचार्य वात्स्यायन ने दिए गए 6 सूत्रों के द्वारा उदाहरण प्रस्तुत करके यह बताया है कि काम मनुष्य को बुरा, घिनौना और दयनीय बनाकर आखिरी में उसका नाश कर देता है। इस तर्क के मत में जो उदाहरण दिए गए हैं वह अर्थ चिंतकों के हैं।

कौटिल्य ने भी राजा को इंद्रियों को जीतने वाला बनने का मशवरा देते हुए लिखा है कि विद्या तथा विनय का हेतु, इंद्रियों को जीतने वाला है। इसलिए क्रोध, काम, लोभमान, मद, हर्ष और ज्ञान से इंद्रियों को जीतना चाहिए।

[www.freehindipdfbooks.com](http://www.freehindipdfbooks.com)

### अध्याय 3 विद्यासमुद्देशः

#### १लोक-१. धर्मार्थागडविद्याकालाननुपरोधयन् कुमसूतं तदगडविद्याश्च पुरुषोऽधीयीत ॥॥

अर्थ- अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र और इनके अंगभूत शास्त्रों के अध्ययन के साथ ही पुरुष को कामशास्त्र के अंगभूत शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए।

व्याख्या-

मुनि वात्स्यायन ने इस श्लोक में “विद्या” शब्द का उपयोग किया है। धर्मविद्या और उसकी अंगभूत विद्याओं को पढ़ने के साथ कामशास्त्र तथा उसकी अंगभूत विद्याओं को पढ़ने की सलाह दी गयी है।

यह चौदह विद्याओं तथा सात सिद्धांतों पर आधारित है। इन्ही चौदह विद्याओं के विभिन्न प्रकार बाद में विभिन्न शास्त्रों तथा सिद्धांतों के रूप में प्रचलित हुए।

याजवल्यक्य स्मृति के द्वारा चार वेद, छह शास्त्र, मीमांसा, न्याय पुराण तथा धर्मशास्त्र- इन चौदह विद्याओं का वर्णन है। इसके अतिरिक्त पाञ्चरात्र, कापिल, अपरान्तरतम, ब्रह्मिष्ट, हैरण्यगर्भ, पाशुपात तथा शैव इन सात सिद्धांतों का भी उल्लेख है।

इन चौदह विद्याओं के 70 महातंत्र और 300 शास्त्र हैं। महातंत्र की तुलना में शास्त्र बहुत छोटे और संक्षिप्त होते हैं। यह विद्या विस्तार शिव (विशालाक्ष) ने कहा था। महाभारत में यह लिखा है कि ब्रह्म के तिवर्ग शास्त्र से शिव (विशालाक्ष) ने अर्थ भाग अर्थात् अर्थशास्त्र को भिन्न किया था। उस अर्थभाग में विभिन्न विषय थे। बाद में उन्ही के आधार पर विभिन्न ग्रंथ लिखे गये हैं जो निम्न हैं-

1. लोकायव शास्त्र।
2. धनुर्वद शास्त्र।
3. व्यूह शास्त्र।
4. रथसूत्र।
5. अश्वसूत्र।
6. हस्तिसूत्र।
7. हस्त्वायुर्वद।
8. शालिहोत्र।
9. यंत्रसूत्र।
10. वाणिज्य शास्त्र।
11. गंधशास्त्र।

12. कृषिशास्त्र।
13. पाशुपताख्यशास्त्र।
14. गोवैद्ध।
15. वृक्षायुर्वेद।
16. तक्षशास्त्र।
17. मल्लशास्त्र।
18. वास्तुशास्त्र।
19. वाको वाक्य।
20. चित्रशास्त्र।
21. लिपिशास्त्र।
22. मानशास्त्र।
23. धातुशास्त्र।
24. संख्याशास्त्र।
25. हीरकशास्त्र।
26. अद्वितीयशास्त्र।
27. तांत्रिक श्रति।
28. शिल्पशास्त्र।
29. मायायोगवेद।
30. माणव विद्या।
31. सूदशास्त्र।
32. द्रव्यशास्त्र।
33. मत्स्यशास्त्र।
34. वायस विद्या।
35. सर्प विद्या।
36. भाष्य ग्रन्थ।
37. चौर शास्त्र।

### 38. मातृतंत्र।

उपर्युक्त दी गयी 38 तरह की विद्याएं हैं। इनमें से अधिकतर जानकारी कौटलीय अर्थशास्त्र में मिलती है।

वेद के छह अंगों में से एक अंग कल्प को माना गया है। कल्प शब्द का अर्थ विधि, नियम तथा न्याय है। ऐसे शास्त्र जिनमें विधि, नियम तथा न्याय के संक्षिप्त, सारभूत तथा निर्दोष वाक्य समूह रहते हैं उन्हें कल्पसूत्र के नाम से जाना जाता है।

कामसूत्र के तीन भेद हैं- श्रौत, गृह्य और धर्म। श्रौतसूत्रों में यज्ञों के विधान तथा नियम के बारे में वर्णित किया गया है। गृहसूत्रों में जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी लौकिक और पारलौकिक कर्तव्यों तथा अनुष्ठानों के बारे में उल्लेख किया गया है। धर्मसूत्रों में अनेक धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक कर्तव्यों और दायित्वों का वर्णन किया गया है।

कामसूत्र के समान ही धर्मशास्त्र भी श्रौत धर्मशास्त्र तथा स्मार्त धर्मशास्त्र- दो भागों में विभाजित है। सभी धर्मशास्त्रों का मूल उद्देश्य कर्मफल में विश्वास, पुनर्जन्म में विश्वास तथा मुक्ति पर आस्था है। इन्हीं तीन बातों का विस्तार जीवन के विभिन्न अंगों तथा उद्देश्यों को लेकर धर्मशास्त्रों में किया गया है।

आचार्य वात्स्यायन का उद्देश्य अर्थशास्त्र तथा धर्मशास्त्र के इसी व्यापक क्षेत्र का अध्ययन है। इसके साथ ही कामसूत्र और उसके अंगभूतशास्त्र (संगीत शास्त्र) के लिए वह सलाह देता है।

अर्थशास्त्र तथा धर्मशास्त्र की ही तरह कामशास्त्र में भी जीवन के लिए उपयोगी भावनाओं तथा प्रतिक्रियाओं का विस्तार से वर्णन किया गया है। वात्स्यायन के अनुसार अर्थशास्त्र तथा धर्मशास्त्र के अध्ययन के अलावा कामसूत्र का अध्ययन भी जीवन के लिए उपयोगी होता है।

आचार्य वात्स्यायन ने कामशास्त्र न लिखकर उसके स्थान पर कामसूत्र लिखा है। इसका कारण यह है कि जिस प्रकार अर्थशास्त्र के क्षेत्र में केवल कौटलीय अर्थशास्त्र ही एक उपलब्ध ग्रंथ है। उसी तरह से कामशास्त्र के क्षेत्र में प्राचीन ग्रंथों का अभाव है जिसके कारण वात्स्यायन का यह कामसूत्र ही विशेष उपयोगी है।

कामसूत्रकार कामसूत्र के साथ-साथ इसके अंगभूतशास्त्र अर्थात् संगीत को भी पढ़ने की सलाह देता है। जिस प्रकार कामशास्त्र सृष्टि-रचना का सहायक है। उसी प्रकार से संगीतशास्त्र की नादविद्या भी संसार के रहस्यों को समझने का एक मुख्य साधन है। संगीत के स्वरों से देवता, ऋषि, ग्रह, नक्षत्र, छंद आदि का गहरा संबंध होता है।

वाद्ययंत्रों को संगीत का सहायक माना जाता है। संगीत ब्रह्मनंद का सहोदर माना गया है। अर्थ, धर्म तथा काम को त्रिवर्ग कहा जाता है। यह त्रिवर्ग ही मोक्ष प्राप्ति का साधन होता है। वात्स्यायन के अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, कामशास्त्र तथा संगीत शास्त्र के अध्ययन की सलाह का अर्थ मोक्ष की प्राप्ति समझना चाहिए।

#### १८०क-२. प्राग्यौवनात् स्त्री। प्रता च पत्युभिप्रायात् ॥२॥

अर्थ- इन चौदह विद्याओं तथा सात सिद्धांतों का अध्ययन केवल पुरुष को ही नहीं, बल्कि स्त्री को भी करना चाहिए।

व्याख्या-

युवावस्था से पहले ही स्त्री को अपने पिता के घर में अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, कामशास्त्र तथा संगीतशास्त्र का अध्ययन करना चाहिए। विवाह होने के बाद स्त्री को अपने पति से आज्ञा लेकर ही कामसूत्र का अध्ययन करना चाहिए।

### **१लोक-३. योषितां शास्त्रग्रहणस्याभावादनर्थकमिहशास्त्रे स्त्रीशासनामित्याचार्या॥३॥**

अर्थ- शास्त्रों का अध्ययन करना स्त्रियों के लिए सही नहीं है। इस सूत्र में बारे में

कुछ आचार्यों के अनुसार स्त्रियों में शास्त्र का भ्रम समझने का अभाव होता है। इसलिए स्त्रियों को कामसूत्र और उसकी अंगभूत विद्याओं का अध्ययन कराना निरर्थक होता है।

### **१लोक -४. प्रयोगग्रहणं त्वासाम्। प्रयोगस्य च शास्त्रपूर्वकक्त्वादिति॥४॥**

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन जी कहते हैं कि स्त्रियों को कामसूत्र के सिद्धांतों के क्रियात्मक प्रयोग का अधिकार तो ही तथा क्रियात्मक प्रयोग के बिना शास्त्र के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती है। इसलिए स्त्रियों के लिए कामसूत्र का अध्ययन करना अनुचित होता है।

सेक्स क्रिया का उद्देश्य केवल वासनाओं की ही तृप्ति ही नहीं है, बल्कि इससे भी अधिक इसका सामाजिक और आध्यात्मिक उद्देश्य होता है। यह सच है कि स्त्रियों में सेक्स की स्वाभाविक प्रवृत्ति रहती है लेकिन यह प्रवृत्ति तो सभी जीवधारियों में होती है। पशु-पक्षी, जलीय प्राणी आदि सभी जीव सेक्स क्रियाएं करते हैं। मनुष्य तथा अन्य प्राणियों में एक ही अंतर होता है वह है विवेक का। यदि मनुष्य भी विवेकशून्य होकर सेक्स क्रिया करने लगे तो उसमें और पशुओं में कोई भी अंतर नहीं रह जाता है।

मनुष्य और अन्य जीवधारियों के बीच के इसी अंतर को दूर करने के लिए तथा काम के चरम उद्देश्य की पूर्ति के लिए कामशास्त्र की शिक्षा स्त्री तथा पुरुष दोनों को समान रूप से आवश्यक होती है। सेक्स क्रिया के समय जब अगर-मगर की स्थिति उत्पन्न होती है तो उस समय कामसूत्र की शिक्षा ही उपयोग में आती है।

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणन्ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।

अर्थ- इस प्रकार की दुविधा में शास्त्र ही सही मार्ग दिखाता है। जिस स्त्री को कामशास्त्र अर्थात् सेक्स संबंधी संपूर्ण जानकारी होती है उस स्त्री को अपने कौर्मावस्था में या दाम्पत्य जीवन में उचित और अनुचित का विचार करने में आसानी होती है। ऐसी स्त्री कभी-भी दुविधा में नहीं फंस सकती है।

मीमांसा दर्शन के अनुसार जिस प्रकार विद्युत शक्ति में आकर्षण और विकर्षण की शक्ति होती है लेकिन यदि दोनों को परस्पर मिला दें तो प्रकाश तथा गति संचालित होती है। उसी प्रकार पुरुष तथा स्त्री के परस्पर सहयोग से सृष्टि का संचालन होता है। यदि दोनों अलग-अलग होते हैं तो निष्क्रिय बने रहते हैं।

कामशास्त्र का यही उद्देश्य है कि वह स्त्री तथा पुरुष को परस्पर मिलाकरके मोक्ष प्राप्ति का अधिकारी बना दें और वह स्त्री तथा पुरुष की की अनुचित क्रियाओं, पाशुविक प्रवृत्तियों को नियंत्रित करके दोनों की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, लौकिक तथा पारलौकिक उन्नति में योग दे तथा दोनों को परस्पर मिला करके उनकी पूर्णता का आभास करा दे।

स्त्री तथा पुरुष दोनों में कामसूत्र के अध्ययन के द्वारा ज्ञान प्राप्ति से मधुर संबंध स्थापित होते हैं। इससे उनके मन में पवित्रता बनी रहती है। जिससे सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन की सुव्यवस्था, सुख, स्वास्थ्य तथा शांति बनी रहती है।

इसके अतिरिक्त स्त्री तथा पुरुषों में मौखिक भेद होने से दोनों की प्रकृति तथा प्रवृत्ति में भी अंतर होता है। कामशास्त्र के अध्ययन के द्वारा स्त्री को पुरुष की तथा पुरुष को स्त्री की प्रकृति के बारे संपूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार वे दोनों अलग होते हुए एक-दूसरे में पानी की तरह मिल जाते हैं।

वात्स्यायन के अनुसार कामशास्त्र का अध्ययन स्त्री के लिए बहुत ही आवश्यक है।

**१लोक-5.** तत्र केवलमिहैब। सर्वत्र हि लोके कतिचिदिदेव शास्त्रजः। सर्वजनविषयश्च प्रयोगः॥५॥

अर्थ- इसके अंतर्गत शास्त्र के परोक्ष प्रभाव को विभिन्न उदाहरणों द्वारा प्रस्तुत कर रहे हैं।

कामशास्त्र के लिए यह बात नहीं है, बल्कि संसार में सभी शास्त्रों की संख्या कम है तथा शास्त्रों के बताए हुए प्रयोगों के बारे में सभी लोगों को जानकारी है।

**१लोक -6.** प्रयोगस्य च दूरस्थमपि शास्त्रमेव हेतु॥६॥

अर्थ- तथा दूर होते हुए भी प्रयोग का हेतु शास्त्र ही है।

**१लोक -7.** अस्ति व्याकरणमित्यवैयाकरण अपि याजिका ऊहं क्रतुषु॥७॥

अर्थ- व्याकरण शास्त्र के होते हुए भी अवैयाकरण याजिक यज्ञों में विकृतियों का उचित प्रयोग करते हैं।

**१लोक -8.** अस्ति ज्योतिषमिति पुण्याहेषु कर्म कुर्वते॥८॥

अर्थ- ज्योतिष शास्त्र के होते हुए भी ज्योतिष न जानने वाले लोग व्रत पर्वों में संपन्न होने वाले विशेष कार्यों को किया करते हैं।

**१लोक -9.** तथाश्वारोहा और गजारोहाश्वाश्वान् गजांश्वानधिगतशास्त्रा अपि विनयन्ते॥९॥

अर्थ- तथा महावत और घुड़सवार हस्तिशास्त्र तथा शालिहोत्र का अध्ययन किये बगैर साथियों तथा घोड़ों को वश में कर लेते हैं।

**१लोक-10.** तथास्ति राजेति दूरस्था अपि जनपदा न मर्यादामतिवर्तन्ते तदवदेतत॥१०॥

अर्थ- जिस प्रकार दंड देने वाले राजा की उपस्थिति मात्र से प्रजा राज्य के नियमों का उल्लंघन नहीं करती है। उसी प्रकार यह कामशास्त्र है जिसका अध्ययन किए बगैर ही लोग उसका प्रयोग करते हैं।

**१लोक-11.** सन्तपि खलु शास्त्रप्रहतबुद्धयो गणिका राजपुत्र्यो महामादुहितरश्च॥११॥

अर्थ- स्त्रियों में शास्त्र को समझने की अक्ल नहीं होती है। इस आक्षेप का निराकरण करते हुए सूक्षकार का मत है-

इस प्रकार की मणिकाएं, राजपुत्रियां तथा मंत्रियों की पुत्रियां हैं जोकि सिर्फ प्रयोगों में ही नहीं बल्कि कामशास्त्र तथा संगीतशास्त्र में भी कुशल और निपुण होती हैं।

राजपुत्रियों तथा मणिकाओं के कामशास्त्र तथा उसके अंगभूत संगीतशास्त्र की व्यावहारिक तथा तात्त्विक शिक्षा प्रदान करने की भारतीय प्रणाली बहुत ही प्राचीन है। भारतीय समाज में वेश्याओं का सम्मान उनके रूप, आयु तथा आकर्षण के साथ ही उनकी विद्वता तथा योग्यता आदि कारणों से होता है।

बौद्ध जातकों की “अम्बपाली” तथा भास के नाटक दरिद्र चारुदत की “बसंतसेना” रूप तथा गुण में आदर्श स्त्री मानी जाती थी। उनके इसी रूप तथा गुण के कारण बड़े-बड़े राजा-महाराजा और साधु-संत उनके पास जाया करते थे।

राजपुत्रियों में उज्जयिनी के राजा प्रद्योत-वण्डमहासेन की पुत्री वासवदत्ता बहुत अधिक सुंदर और कला में कुशल थी। राजा प्रद्योत-वण्डमहासेन ने कौशाम्बी के राजा उदायन को छल करके इसलिए बंदी बनाया था ताकि वह उसकी पुत्री को वीणा बजाने की अद्वितीय कला सिखा दे।

प्राचीन काल में सामाजिक शिष्टाचार तथा कला की शिक्षा प्राप्त करने के लिए राजा अपने पुत्र और पुत्रियों को मणिकाओं के पास भेजते थे।

भारतीय समाज में विद्वान् और रूपवती गणिकाएं आदरणीय ही नहीं बल्कि मंगल सामग्री भी मानी जाती थी। इसी कारण से उन्हें मंगलामुखी के नाम से भी जाना जाता है। ज्योतिष के अनुसार यात्रा के समय गणिकाओं का दर्शन मंगलसूचक माना जाता है। किसी भी यज्ञ के होने पर ऋषि-मुनि गणिकाओं को भी बुलाते थे।

भारतीय समाज में गणिकाएं एक प्रमुख अंग मानी जाती हैं। शासन और जनता दोनों के द्वारा गणिकाओं को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। इस प्रकार की गणिकाएं और लक्षित कला तथा संगीत कला की जानकारी रखने वाले व्यक्ति बड़े-बड़े लोगों के संतानों को शिक्षा देने का कार्य करते हैं।

**श्लोक -12. तस्माद्वैसिकाञ्जनाद्रहसि प्रयोगञ्जास्त्रमेकदेशं वा स्त्री गृहवीयात॥12॥**

अर्थ- इस कारण से स्त्री को एकांत स्थान पर सभी प्रयोगों की, कामशास्त्र की, संगीतशास्त्र की और इनके आवश्यक अंगों की शिक्षा अवश्य ग्रहण करनी चाहिए।

**श्लोक -13. अङ्ग्यासप्रयोज्यांश्च चातुःषष्ठिकान् योगान् कन्या रहस्येकाकि-न्यभसेत॥13॥**

अर्थ- अङ्ग्यास के द्वारा सफल होने वाली चौसठ कलाओं के प्रयोगों का अङ्ग्यास कन्या को किसी एकांत स्थान पर करना चाहिए।

**श्लोक -14. आचार्यस्तु कन्यानां प्रवृत्पुरुषसंप्रयोगा सहसंप्रवृद्धा धात्रेयिका। तथाभूता वा निरत्ययसम्भाषणा सखी। सवयाश्च मातृष्वसा। विस्त्रब्धा तत्स्थानीया वृद्धदासी। पूर्वसंसृष्टा वा भिक्षुकी। स्वसा च विश्वास च विश्वास-प्रयोगात॥14॥**

अर्थ-

विश्वस्त स्त्री-शिक्षिका का निर्देश करते हैं-

निम्नलिखित 6 प्रकार की आचार्याओं में से कोई एक, कन्याओं की आचार्य हो सकती है।

- पुरुष के साथ सेक्स का अनुभव प्राप्त कर चुकी हो ऐसी, साथ में पली-पोसी खेली हुई धाय की पुत्री।
- साफ दिल की ऐसी सखी या सहेली जो सेक्स का अनुभव प्राप्त कर चुकी हो।

3. अपने समान उम्र की मौसी।
4. मौसी के ही समान विश्वासपात्र बूढ़ी दासी।
5. अपनी बड़ी बहन।
6. परिवार, शील स्वभाव से पहले से परिचित, भिक्षुणी- संयासिनी।

पुरुषों को कामशास्त्र की शिक्षा देने के लिए आचार्य तथा शिक्षक आसानी से मिल जाते हैं लेकिन स्त्रियों को कामशास्त्र की शिक्षा देने के लिए आचार्य तथा शिक्षक मुश्किल से उपलब्ध हो पाते हैं। इसीलिए आचार्य वातस्यायन ने उपरोक्त 6 प्रकार की औरतों में किसी एक औरत से कामशास्त्र की शिक्षा लेने की सलाह दी है।

कामशास्त्र की शिक्षा के लिए इस प्रकार के निर्वाचन में विश्वास, आत्मीयता तथा पवित्रता निहित है। इस प्रकार की औरतों को सीखने और सिखाने में किसी भी प्रकार का शर्म या संकोच नहीं होता है। कामसूत्र के शास्त्रकारों ने उपरोक्त 6 प्रकार की आचार्यों का चुनाव कामशास्त्र की 64 कलाओं की शिक्षा के लिए किया है। इन 64 कलाओं की शिक्षा के लिए निरंतर अभ्यास करने की आवश्यकता होती है।

इसके अलावा कामसूत्र के शास्त्रकारों ने यह भी सलाह दी है कि यदि किसी कारणवश सभी 64 कलाओं की शिक्षा प्राप्त करने के लिए कोई योग्य आचार्य न मिल सके, तो जितना भी समय मिले उतने ही में और आधी, तिहाई, चौथाई कलाओं को जानने वाली जो भी आचार्य मिल सके उससे कामसूत्र की कलाएं सीख लेनी चाहिए।

**१५. गीतम्१, वाद्यम्२, नृत्यम्३, आलेख्यम्४, विशेषकच्छेद्यम्५, तण्डुलकुसुमवलिविकारा:६, पुष्पास्तरणम्७,**  
**दशनवसनाङ्गरागः८, मणिभूमिकार्कम्९, शयनकचनम्१०, उदकवाद्यम्११, उदकाघातः१२, चित्राश्च१३,**  
**योगः, माल्यग्रथनविकल्पाः१४, शेखरकापीडयोजनम्१५, नेपथ्यप्रयोगाः१६, कर्णपत्रभंगाः१७, गन्धयुक्तिः१८, भूषणयोजनम्१९,**  
**ऐन्द्रजालाः२०, कौचुमारश्च योगाः२१, हस्तलाघवम्२२, विचित्रशाकयूषक्षयविकारक्रियाः२३, पानकरसरागासवयोजनम्२४,**  
**सूचीवानकर्माणि२५, सूत्रक्रीडाः२६, वीणाडमरुवाद्यानि२७, प्रहेलिकाः२८, प्रतिमालाः२९, दुर्वाचकयोगाः३०, पुस्तकवाचनम्३१,**  
**नाटकाख्यायिकादर्शनम्३२, काव्यसमस्यापूरणम्३३, पट्टिकावाननेत्रविकल्पाः३४, तक्षकर्माणि३५, तक्षणम्३६,**  
**वास्तुविद्या३७, रूप्यपरीक्षा३८, धातुवादः३९, मणिरागाकरज्ञानम्४०, वृक्षायुर्वेदयोगाः४१, मेषकुकुटलावकयुद्धविधिः४२,**  
**सुकसारिकाप्रलापनम्४३, उत्सादने संवाहने केशर्मदने च कौशलम्४४, अक्षरमुष्टिकाकथनम्४५, म्लेच्छितविकल्पाः४६,**  
**देशभाषाविज्ञानम्४७, पुष्पशक्टिकाः४८, निमित्तज्ञानम्४९, यंत्रमातृकाः५०, धारणमातृकाः५१, सम्पाठ्यम्५२, मानसी**  
**काव्यक्रियाः५३, अधिधानकाशः५४, छंदोज्ञानम्५५, क्रियाकल्पः५६, छलितकयोगाः५७, वस्त्रगोपनानि५८, द्यूतविशेषः५९,**  
**आकर्षक्रीडाः६०, बालक्रीडनकानि६१, वैनयिकीनाम्६२, वैजयिकीनाम्६३, व्यायामिकीनाम्६४, च विद्यानां, इति**  
**चतुःषष्ठिरंगविद्याः। कामसूत्रस्यावयावयविन्यः॥११५॥**

अर्थ- इसके अंतर्गत आपको उपायभूत 64 कलाओं के नाम बताये जा रहे हैं-

1. गीतम्- गाना
2. वाद्यम्- बाजा बजाना
3. नृत्यम्- नाचना
4. आलेख्यम्- चित्रकारी

5. विशेषकच्छेद्यम्- भोजन के पत्तों को तिलक के आकार में काटना।
6. ताण्डुलकुसुमवलिविकाराः- पूजन के लिए चावल तथा रंग-बिरंगे फूलों को सजाना।
7. पुष्पास्तरणम्- घर अथवा कमरों को फूलों से सजाना।
8. दशनवसनाङ्गरागः कपड़ों, शरीर और दांतों पर रंग चढ़ाना।
9. मणिभूमिका कर्म- फर्श पर मणियों को बिछाना।
10. शयनकचनम्- शैया की रचना।
11. उदकावाद्यम्- पानी को इस प्रकार बजाना कि उससे मुरजनाग के बाजे की ध्वनि निकले।
12. उदकाघात- जल क्रीड़ा करते समय कलात्मक ढंग से छीटे मारना।
13. चित्रयोगा- अनेक औषधियों, तंत्रों तथा मंत्रों का प्रयोग करना।
14. माल्यग्रथनविकल्पा- विभिन्न प्रकार से मालाएं गूथना।
15. शेखर कापीड योजनम्- आपीठकं तथा शेखरक नाम के सिर के आभूषणों को शरीर के सही अंगों पर धारण करना।
16. नेपथ्यप्रयोगः- अपने को या दूसरे को सुंदर कपड़े पहनाना।
17. कर्णपत्रभंगः - शंख तथा हाथीदांत से विभिन्न आभूषणों को बनाना।
18. गन्धयुक्तिः- विभिन्न द्रव्यों को मिलाकर सुगंध तैयार करना।
19. भूषणयोजनम्- आभूषणों में मणियां जड़ना।
20. ऐन्द्रजालयोगः- इन्द्रजाल की क्रीणाएं करना।
21. कौचुमारश्च योगः- कुचुमार तंत्र में बताए गये बाजीकरण प्रयोग सौंदर्य वृद्धि के प्रयोग।
22. हस्तलाघवम्- हाथ की सफाई।
23. विचित्रशाकयूषक्ष्यविकारक्रिया- विभिन्न प्रकार की साग-सब्जियां तथा भोजन बनाने की कला।
24. पानकरसरागासवयोजनम्- पेय पदार्थों का बनाने का गुण।
25. सूचीवानकर्मणि- जाली बुनना, पिरोना और सीना।
26. सूत्रक्रीड़ा- मकानों, पशु-पक्षियों तथा मंदिरों के चित्र हाथ के सूत से बनाना।
27. वीणाडमरुवाद्यानि- वीणा, डमरु तथा अन्य बाजे बजाना।
28. प्रहेलिका- पहेलियों को बूझना।
29. प्रतिमाला- अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता का कौशल।
30. दुर्वाचकयोग- ऐसे श्लोक कहना जिनके उच्चारण तथा अर्थ दोनों कठिन हो।

31. पुस्तकवाचनम्- किताब पढ़ने की कला।
32. नाटकाख्यायिकादर्शनम्- नाटकों तथा ऐतिहासिक कथाओं के बारे में जानकारी।
33. काव्यसमस्यापूरणम्- कविताओं के द्वारा समस्यापूर्ति।
34. पट्टिकावाननेत्रविकल्पः- बैंत और सरकंडे आदि की वस्तुएं बनाना।
35. तक्षकर्मणि- सोने-चांदी के गहनों तथा बर्तनों पर विभिन्न प्रकार की नक्काशी।
36. तक्षणम्- बढ़ईगीरी।
37. वास्तुविद्या- घर का निर्माण करना।
38. रूप्यपरीक्षा- मणियों तथा रत्नों की परीक्षा।
39. धातुवाद- धातुओं को मिलाना तथा उनका शोधन करना।
40. मणिरागाकरज्ञानम्- मणियों को रंगना तथा उन्हें खानों से निकालना।
41. वृक्षायुर्वेदयोगा- पेड़ों तथा लताओं की चिकित्सा, उन्हें छोटा और बड़ा बनाने की कला।
42. मेषकुकुटलावक्युद्धविधि:- भेड़ा, मुर्गा तथा लावको को लड़ाना।
43. सुकसारिकाप्रलापनम्- तोता-मैना को पढ़ाना।
44. उत्सादने संवाहने केशमर्दने च कौशलम्- शरीर तथा सिर की मालिश करने की कला।
45. अक्षरमुष्टिकाकथनम्- सांकेतिक अक्षरों के अर्थ की जानकारी प्राप्त कर लेना।
46. म्लेच्छत्विकल्पा- गुप्त भाषा विज्ञान।
47. देशभाषाविज्ञानम्- विभिन्न देशों की भाषाओं की जानकारी।
48. पुष्पशक्टिका- फूलों से रथ, गाड़ी आदि बनवाना।
49. निमित्तज्ञानम्- शकुन-विचार।
50. यंत्रमातृका- स्वयं चालित यंत्रों को बनाना।
51. धारणमातृका- स्मरण शक्ति बढ़ाने की कला।
52. सम्पाठ्यम्- किसी सुने हुए अथवा पढ़े हुए श्लोक को ज्यौं का त्यौं दोहराना।
53. मानसी काव्यक्रिया- विशिष्ट अक्षरों से श्लोक बनाना।
54. अधिधानकोश - शब्दकोषों की जानकारी।
55. छंदोज्ञानम्- छंदों के बारे में जानकारी।

56. क्रियाकल्प- काव्यालंकार की जानकारी।

57. छलितकयोग- बहुरूपियापन।

58.वस्त्रगोपनानि- छोटे कपड़े इस प्रकार पहने कि वह बड़ा दिखाई दे तथा बड़े कपड़े इस प्रकार पहने कि वह छोटा दिखाई दे।

59. द्यूतविशेष:- विभिन्न प्रकार की द्यूत क्रियाओं की कला।

60. आकर्षकीड़ा- पासा खेलना।

61. बालक्रीड़नकानि:- बच्चों के विभिन्न खेलों की जानकारी।

62.वैज्ञानिकानां विद्यानां ज्ञानम्- विजय सिखाने वाली विद्याएं, आचार शास्त्र।

63.वैज्ञानिकानां विद्यानां ज्ञानम्- विजय दिलाने वाली विद्याएं तथा आचार्य कौटिल्य का अर्थशास्त्र।

64. व्यायामिकीना विद्यानां ज्ञानम् - व्यायाम के बारे में जानकारी।

कामसूत्र की अंगभूत ये 64 विद्याएं हैं।

आचार्य वात्स्यायन ने यहां पर कलाओं का वर्गीकरण नहीं बल्कि उनका परिगणन किया है। कलाओं की गणना के बारे में सबसे अधिक प्रचलित तथा प्रसिद्ध संख्या 64 है। तंत्रग्रंथों और शुक्रनीति में भी कलाओं की संख्या 64 ही है। कहीं-कहीं इन कलाओं का उल्लेख सोलह, बत्तीस, चौसठ तथा चौसठ से अधिक नाम से भी मिलता है।

प्रसिद्ध ग्रंथ ललित विस्तार में कामकला के रूप में 64 नाम दिये गये हैं तथा कामकला के रूप में 23 नाम हैं। प्रबंधकोष के अंतर्गत इसकी संख्या 72 दी गयी है। इसके अलावा कला विलास पुस्तक में सबसे अधिक कलाओं के बारे में जानकारी दी गयी है, जिनमें से 32 धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति, 64 लोकोपयोगी कलाएं तथा 32 मात्सर्य शील प्रभाव तथा मान की है।

लोगों को आकर्षित करने की 10 भेषज कलाएं, 64 कलाएं वेश्याओं की तथा 16 कायस्थों की कलाएं हैं। इसके अतिरिक्त गणकों की कलाओं तथा 100 सार कलाओं का वर्णन है।

अन्य कामशास्त्रियों तथा आचार्य वात्स्यायन द्वारा बतायी गयी कलाओं पर ध्यान देने से यह जानकारी प्राप्त होती है कि उस समय के आचार्य किसी भी विषय अथवा कार्य में निहित कौशल को कला के अंतर्गत रखते हैं। आमतौर पर ललित तथा उपयोगी दोनों प्रकार की कलाएं कलाकोटि में परिगणित होती हैं।

कला शब्द का सबसे पहले प्रयोग ऋग्वेद में हुआ है। विभिन्न उपनिषदों में भी कला शब्द का प्रयोग मिलता है। इसके अलावा वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्वेद), सांख्यायनब्राह्मण, तैत्तीरीय, शतपथ ब्राह्मण, षडविंशब्राह्मण और आरण्यक आदि वैदिक ग्रंथों में भी कला शब्द का प्रयोग मिलता है। भरत के नाट्य शास्त्र से पहले कला शब्द का अर्थ ललित कला में प्रयोग नहीं हुआ था। कला शब्द का वर्तमान अर्थ जो है उस अर्थ का द्योतक शब्द शास्त्र से पहले शिल्प शब्द था।

संहिताओं तथा ब्राह्मण ग्रंथों में शिल्प शब्द कला के अर्थ में प्रयोग किया जाता रहा है। पाणिनी द्वारा रचित अष्टाध्यायी तथा बौद्ध ग्रंथों के अंतर्गत शिल्प शब्द उपयोगी तथा ललित दोनों प्रकार की कलाओं के लिए होता है।

आचार्य वात्स्यायन ने कामसूत्र की जिन 64 कलाओं का वर्णन किया है। उन्हें कामसूत्र की अंगभूत विद्या कहते हैं।

आचार्य वात्स्यायन ने कामसूत्र में जिन 64 कलाओं का वर्णन किया है। उन सभी कलाओं के नाम का उल्लेख यजुर्वेद के तीसवें अध्याय में किया गया है।

यजुर्वेद के इस अध्याय में 22 मंत्रों का उल्लेख किया गया है जिनमें से चौथे मंत्र से लेकर बाइसवें मंत्र तक उन्हीं कलाओं तथा कलाकारों के बारे में जानकारी दी गयी है।

**श्लोक-16. पान्चालिकी च चतुःषष्टिरपरा। तस्याः प्रयोगानन्ववेत्य सांप्रयोगिके वक्ष्यामः॥ कामस्य तदात्मकत्वात्॥16॥**

अर्थ- पहले वर्णित 64 कलाओं से भिन्न पांचाल देश की 64 कलाएं हैं। वे पांचाली कलाएं कामात्मक हैं, इसलिए उनका वर्णन आगे साम्प्रयोजिक अधिकरण में किया गया है।

**श्लोक-17. आभिरङ्गुच्छित्ता वेश्या शीलरूपगुणान्विता। लभते गणिकाशब्दं स्थानं च जनसंसदि॥17॥**

अर्थ- गुणशील तथा रूप संपन्न वेश्या इन कलाओं के द्वारा उत्कर्ष प्राप्त कर गणिक का पद प्राप्त करती है और समाज में आदर प्राप्त करती है।

**श्लोक-18. पूजिता या सदा राजा गुणवद्धिश्च संस्तुता। प्रार्थनीयाभिगम्या च लक्ष्यभूता च जायते॥18॥**

अर्थ- इन गणिकाओं का सम्मान राजा करता है, उसकी प्रशंसा गुणवान् लोगों के द्वारा होती है। आम लोग उससे कलाएं सीखने के लिए प्रार्थना करते हैं। इस प्रकार से वह सभी का केन्द्र विन्दु बन जाती है।

**श्लोक-19. योगजा राजपुत्री च महामात्रसुता तथा। सहस्रान्तःपुरमपि स्वनशे कुरुते पतिम्॥19॥**

अर्थ- राजाओं और मंत्रियों की जो पुत्रियां कामसूत्र की 64 कलाओं का जान प्राप्त कर लेती हैं। वे हजारों स्त्रियों से सेक्स करने की क्षमता रखने वाले पुरुष को भी वश में कर लेती हैं।

**श्लोक-20. तथा पतियोग च व्यसनं दारुणा गता। देशोन्तरेऽपि विद्याभिः सा सुखेनैव जीवति॥20॥**

अर्थ- ऐसी स्त्रियां किसी कारणवश पति से विमुक्त होने पर या किसी संकट में फँस जाने पर उसे अंजान जगह पर जाना पड़े तो वह अपनी कामसूत्र की 64 कलाओं के द्वारा अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत कर सकती है।

**श्लोक-21. नरः कलासु कुशलो वाचालश्चाटुकारकः। असंस्तुतोऽपि नारीणां चित्तमाश्चेव चिन्दति॥21॥**

अर्थ- ऐसी स्त्रियों की कला की विशेषता बताने के बाद पुरुषों के गुणों के बारे में बताया जा रहा है। बातचीत करने में निपुण, चाटुकार पुरुष यदि कुशल कलाकार हो तो अपने से घृणा करने वाली स्त्रियों का मन भी आकर्षित कर लेता है।

**श्लोक-22. कलानां ग्रहणादेव सौभाग्यमुपजायते। देशकालौ त्वपेक्ष्यासां प्रयोगः संभवेत्र वा॥22॥**

अर्थ- कलाओं की जानकारी प्राप्त कर लेने से ही सौभाग्य जागृत हो जाता है लेकिन देश तथा समय प्रतिकूल हो तो इन कलाओं के प्रयोगों की सफलता में आशंका हो जाती है।